MSS No. 270 Subject Philosophy

Name of MSS सिद्धान्त बिन्दु साधन पंचक

Author शंकराचार्य

Period Folios 131

Script Sanskrit Source Prithi pal Singh

Missing Folios N.A.

सिद्दान्त बिन्दु साध्नपंचक टीका;
शंकराचार्य कृत ॥
१५७ पत्रक ॥ ल० म० १४ पं० प्र० पू०

ह० ल०

270

१९ ननुस्वेदुपरागार्थरित्ति पहे
१ जपाकुसुमकानीरूपरविषे दृष्टांतकैसेहै
१ आकाशजोनीरूपनहोवेतो तिसकाजानूमात्रजलविषे अतिगंभीरतोकैदर्शन क्योंहोवे येकैसेहै

१ वेदांतसाररविषयुक्तरजन अध्यासकास्थानपूरूता

रविषसंपृक्तो [illegible] रोन यौहतौ श्रुतवहि लो तयोर्मासे कल्जेस्याकुल्का चांद्राय णंचरेत्

ननुतब मनके दृश्यपाकारके अनंगीकारतें अर तो समनके दृश्यत्वके हूं असंभवककै आत्माके हूं स्वयंज्योतिकी असिद्धहोवेहै इतिचेत्र बाह्यंद्रि यवृत्तिके अभावककै तबमनके अग्राहकत्वतें क्या बाह्येंद्रियद्वारा मनग्राहक होताहै इसनियम तें अरतहां सबवृत्तिकां तःकरणावछिन्न चैतन्यके प्रमातृत्वके नियमतें तबक्या स्वप्नविषे बाह्येंद्रिय के अभावतें अंतःकरणके सत्वसतें हूं चैतन्यके प्रमातृत्वका अभावहै नस्वयंज्योतिस्वरूपको

लक्षणां असाधारणधर्मः तत्रलक्ष्यके स्वरूपही लक्षण तातें असंभवर्त्ति अव्याप्तिर तिव्याप्तिरसंभव अरतिल लौकेलक्ष्यवृत्तित्वमव्याप्तिः यथागोः कपिलत्व अलक्ष्यवृत्तित्वमतिव्याप्तिः यथागोः शृंगीत्वं लक्ष्यमात्रावर्तनमसंभवः यथागोरेक शफत्वं एतद्दूषणत्रयरहितोयोधर्मः लक्षणं सएवअसाधारणधर्मः लक्षणं
इकुर

[illegible]

(७)

سادھن درپنا

2 कर्मको क्रियासौं संबंध लक्षणा करहूं है और हेतुके
रहूं है लक्षणा कहीये औरविनाभूतत्त्व विषे संबंधसो
इहां उपवेशन कर्म रूप कर्मके अकरण विषे संबं
धकूं जनावता है नित्यकर्मको अकरण प्रत्यवायको जन
क नहीं ताते गंगाके तीर विषे गोशाके संभव जैसे नि
त्यकर्मके अकरणको उपलक्षण उपवेशनादिक प्र
त्यवायकाजनक है क्रियालक्षणा और हेतुके अभेदसं
बंध हैं जैसे गंगायां गोशाः गोशाके आधारत्व पृथ्वीके
संभवतें गंगाप्रवाहके आधारत्वके असंभव हेतुतें
गंगायां गोशाः ऐसी क्रियासिद्ध नहीं होती तैसें इहां
अभावके कार्यजननकत्व हेतुके अभावतें
अनिष्टपदार्थ विषे तिसअनिष्टके अनुकूल जो से
अनिष्टज्ञान होता है तिसका अभाव है सहकारी जि
सका ऐसा जो इष्टपदार्थ विषे इष्टज्ञान है तत्संबंधी
राग कहीयत है
१
१ सर्वकर्म अरु तत्फल त्याग संन्यास ऐसे कहते हैं
१ फलतृष्णाके त्याग में सामर्थ्य के परित्याग कर विहितकर्म
...नुष्ठान है सो कर्मयोग कहीयत है
१ प्रमाणादिक पंचवृत्तिको निरोध मुख्ययोग कहीयत है
इसप्रकार केवलतत्वपद लक्ष्यको अंतःकरणमें देखता है और रही

१ जीवब्रह्मका एकत्वज्ञान योग है अरु तहीं असंप्रज्ञात है

१ स्वनिरोध समाधिके तत्वं प्रभु पदार्थोंका साक्षात्कार करीयत है ईहां उपाधी का स्वनिरोध होता है

१ स्वनिर्विकल्पक के महावाक्योंते एकत्व का ज्ञान होता है
केवलस्थिति ब्रह्मस्वरूपकी

१ असंप्रज्ञातकके अमन स्वरूप हो रहता है

अभिन्ने भेद इत्युक्तो व्याघातो भेदबाध्यता
भिन्ने ऽनवस्थितिर्दोषस्तथैवात्माश्रयादयः १
३३ टी० अभिन्नेति भेदः इति एके मत अभिन्ने ध
र्मस्ति तिष्ठति भिन्ने वा तत्र अभिन्ने भेदात्पत्ता मा
ववत्ति भेद इत्युक्तौ व्याघातो भेदस्य मिथ्यात्वं च ॥
भिन्ने भेद युक्ते भेद इत्युक्तौ पूर्वपूर्वस्यापि भेद यु
क्तापेक्षयत्तया अनवस्था स्वेन भेदेन वै युक्ते
स्वापेक्षितत्वेन आत्माश्रयः पूर्वभेदस्य स्वाश्रित
भेद [illegible] युक्तापेक्षितत्वे ऽन्योन्याश्र
यः पूर्वाश्रयविश्रान्तो परात्वेन तृतीय भेदस्वीका
रे तदाश्रयविश्रान्त बगत्वं स्वापेक्षितापेक्षितस्य
अन्यस्य वा च्यानोअनेकव्यवधानेन आत्मा
श्रियरूपाचक्रिका क्षितायतदाश्रयवि

ऽनेषस्यान्यस्यान्यस्याऽभिमतावनवस्थाना
द्वस्यां इत्येवमसंभावितत्वेनप्रमाणाद्वे
3 षयताभ्रांतैकाभातोयोभेदः सोऽध्यातोऽप्या
देशो नेत्तिनेत्तिनेत्तिनेह नानास्तिकिंचनेरते
श्रुत्यात्रनिषेधितः अथवस्तो

जैसारविंदुकासाधनरूपजोछलजातेरनेमह
स्थान हैं तिन्होंकेलक्षणोंकूंकहते हैं॥ तहांछल
लक्षणकथ्ये औरअभिप्रायकेप्रयुक्तजोशब्द है
तिसकेअर्थांतरकूंकल्पकेंदूषणकाजोकथ
नहै जैसेनवकंबलहैयेवक्तातइसवाक्यका
नैवी कंबड़ा
नूतन अभिप्रायकेंप्रयुक्तकेअर्थांतरकूंआ
श्रींकाकर्केकोईएकदूषणाकर्ताहै नहींइसके
नौकंबलदूरोंपीड़ात्वतेनइसकेवक्तकंबलहैंसे
भावनाकरीयतहैं नौकैसेहोवेंहैं सोवाशील
लेवाहैतोकैजीतीयताहै इति १ अथसउत्तर

नैवीकेवड़ाइनस्रौंसेनावदकेपिकुटुककां

जाति कहीयतु है सो जाति उत्कर्ष अपकर्ष समा
दिभेदकरकै बहुधा है तहां उत्कर्षसमकूं जना
वतै हैं तहां अव्याप्तदृष्टांतगतधर्मककै व्या
दृष्टांतविषै अप्राप्तधर्मककै साध्यविषै अव्याप
कधर्मका आपादन जैसे शब्द अनित्य है कृतकत्व
तें घटजैसे इस युक्तिविषै कोई ऐसे कहता है जे
कृतकत्व हेतुतें घटजैसे शब्द अनित्य होवे तो वाहि
सहीहेतुककै तैनें जैसे शब्द सावयव होवै १
अब अपकर्षसमजातिकूं जनावतै हैं अव्याप्तदृष्टां
तगतधर्मककै अव्यापकधर्माभावका आपा
दन जैसे पूर्वहीं अनुमानविषै कोई कहता है
जो कृतकत्वहेतुककै घटजैसे शब्द नित्य न होइ
तौ तैसैं सहीहेतुककै घटजैसे शब्द श्रावण न होइ
अभेद हेतुतें न घटहूं श्रावण है १ अब निग्रह
स्थानका लक्षण कहते हैं पराजयका हेतु निग्र
हस्थान कहीयतु है सो न्यूनाधिक अपसिद्धां

तारतम्य भेदों कर वैलक्षण्य हैं तहां कहिबे योग्य अर्थ
५ खेबा कों चित्त न्यून कहता न्यून है अरु अधिक कों
हता अधिक कैं सो हीन का नाम अपर सो हीन है १

अभ्यासोंके

प्रलय विषे वृत्ति के स्वरूप का अभाव है इसीतें जन्म प्राप्ति
सत्ति पूर्व जन्म का स्मरन नहीं सुषुप्ति विषे अविद्या वृत्ति रो
ब है इसीतें स्मरन होता है

बाधिक रूप होइ कर जो जनावे सो कहीये लिंग
इसीतें परमात्मा का अधारक है अरु ज्ञापक है लिंग
शरीर शरीर कहीये ज्ञान कर जो शरीर हो वे इसते

एक स्वजाती का एव सजाती का अद्वितीय विजाती का रहेवर्त कहे॥
अहं ग्रहोपासना कहीये मैं हिरण्यगर्भ हों॥

अत्यंत अप्राप्ति विषे विधि करीयत है १ अरु पाक्षिक अ
[illegible] प्राप्ति विषे नियम करीयत है २ विधि अरु निय
म दोनों के प्राप्ति विषे परिसंख्या करीयत है ३

१ इंद्रिय इंद्रियगोचर नहीं परोक्ष्यतात इसीतें इंद्रियों का
अध्यास नहीं

ॐ जाग्रतनिर्णय

१ शृंगारादिक अधिष्ठातृ देवताकर अनुगृहीत जो इंद्रिय
तिन कर शृंगारादि विषयका जो भान सो जाग्रत है॥
जो विषयानुभवकूं जाग्रत कहीये तो स्वप्नमय विषे
यके अनुभव तें स्वप्न मो अतिव्याप्ति आवे है तहां गाधि
शृंगारादि विशेषण कहा॥ और विषयानुभव जा
ग्रत है ऐसे कहणे कर सुषुप्ति मो भी अतिव्याप्ति आवे
है तहां अज्ञान विषयके साक्षी कर अनुभव होवे है तातें
॥१॥
इसी तें शृंगारादि विशेषण कहा

२ - स्वप्ननिर्णय

जाग्रत भोग देणे हारे कर्मके उपराम से तेग और
इंद्रियके उपराम सें तें जाग्रत संस्कार जन्य वि
षय और तिनके ज्ञानकूं स्वप्नावस्था कहीये है
विषय और विषयजन्य ज्ञानकूं जो स्वप्न कहीये
तो सुषुप्ति विषय अतिव्याप्ति होवेगी॥ विषय अज्ञान
और तदनुभव ज्ञानकूं सुषुप्ति विषे होवणे तें॥ इस
के वास्ते जाग्रतादि विशेषण कहा॥ सुषुप्ति वि
षे अज्ञान और तत्साक्षी के अजन्यत्व तें अनादि कर॥
जाग्रत अनुभव संस्कारोद्भूत विषयजन्य ज्ञानकूं स्व
प्न कहीये तो जाग्रत विषय अतिव्याप्ति होवेगी तहां
र जाग्रतादि अनुभवजन्य संस्कारोद्भूत विषयके सात्व
तें

तारतम्य भेदोंका वर्णन करते हैं तहां कहते हैं बैयाग्य अर्थ

५ रवेवेदों का चैतन्य न्यून कहता न्यून है और अधिक का

हृदय अधिक सें सिद्ध है प्रका नाम अपर सें सिद्ध होता है १

प्रलय विषे वृत्ति के स्वरूप का अभाव है इसीतें जन्म प्राप्त
मत्ति पूर्व जन्म का स्मरण नहीं सुषुप्ति विषे अविद्या वृत्ति नी
बहे इसीतें स्मरन होता है

बाधिक रूप होइकर जो जनावे सो कहीये लिंग
इसीतें परमात्मा का अधारक है अर ज्ञापक है लिंग
शरीर शरीर कहीये ज्ञान करनो शरीर ही वे इतें

एक सजाती का एव सजाती का अद्वितीय विजाती का स्नेह तक है
अहंग्रहोपासना कहीये मैं हिरण्यगर्भ हों॥

अत्यंत अप्राप्ति विषे विधि करीयत है १ और पाक्षिक
अप्राप्ति विषे नियम करीयत है २ विधि अर नियम
दोनो के प्राप्ति विषे परिसंख्या करीयत है ३

१ इंद्रिय इंद्रियगोचर नहीं परोक्ष ज्ञान इसीतें इंद्रियोंका
अध्यास नहीं

ॐ जाग्रत निर्णय

१ दिग आदिक अधिष्ठातृ देवताकर अनुगृहीत जो इंद्रिय
तिनकर शब्दादिक विषय का जो भान सो जाग्रत है॥
जो विषयानुभव कूं जाग्रत कहिये तो स्वप्न मे विषे
य के अनुभव तें स्वप्न मो अतिव्याप्ति आवे है तहां गार्थि
दिग आदिक विशेषण कहा और विषयानुभव जा
ग्रत है ऐसे कहत तो कर स्वप्न मो भी अतिव्याप्ति आवे
है तहां अज्ञान विषय के साक्षी कर अनुभव सो होते
इसी तें शब्दादिक विशेषण कहा

२ - स्वप्न निर्णय

जाग्रत भोग देनेहारे कर्म के उपराम से तैसा और
इंद्रियन के उपराम से तें जाग्रत संस्कार जन्य वि
षय और तिन के ज्ञान कूं स्वप्नावस्था कहीये है
विषय और विषय जन्य ज्ञान कूं जो स्वप्न कहीये
तो सुषुप्ति विषय अतिव्याप्ति होवेगी॥ विषय अज्ञान
अरत अनुभव ज्ञान कूं सुषुप्ति विषे होवत तो॥ इस
के वास्ते जाग्रत आदि विशेषण कहा॥ सुषुप्ति वि
षे अज्ञान और तिस साक्षी के अजन्यतं अनादि कर॥
जाग्रत अनुभव संस्कार उद्भूत विषय जन्य ज्ञान कूं स्व
प्न कहीये तो जाग्रत विषय अतिव्याप्ति होवेगी तहां
र जाग्रत आदि अनुभव जन्य संस्कार उद्भूत विषय के सत्व
तें

अरत्तिसके अनिर्वचनीज्ञानके हैं होवताते॥ अथ
वास्मृतिके सद्भाव ते अतिव्याप्ति होवे है जाग्रत्तमो

3 सुषुप्ति निर्णय

5 जाग्रत स्वप्न भोगदेनेहारे कर्मों के उपराम होये १
स्थूल सूक्ष्म शरीराभिमान निवर्त्तपूर्वक घटोपप
टोपं अहं सुखी अहं दुःखी इत्यादि विशेष विज्ञान
उपरामात्मिक बुद्धि के कारण रूप कारणस्थानसो क
हीये सुषुप्ति
विशेष विज्ञानोपरामात्मिका सुषुप्ति कही है ते
जाग्रत् विषे अतिव्याप्ति होवेगी उदासीनावस्था
की प्राप्ति ते॥ इसीतें जाग्रत् कर्मोपरमा कहा॥ समा
धावस्था विषे अतिव्याप्ति वारणार्थ बुद्धिके कारणात्मि
का स्थिति कही॥ समाधि विषे अंतःकरणका सत्व रहे है
॥ विशेष विज्ञान निवृत्ति विषे निमित्त स्वप्न शरीराभिमा
न निवर्त्त है अरु अभिमान निवर्त्ति विषे निमित्त जाग्रतादि
कर्म निवर्त्ति है

४ मूर्छा निर्णय

मुद्गर प्रहार जनित विनाशकर विशेष विज्ञानोपरमा
मूर्छावस्था है॥ जाग्रत् विषे अतिव्याप्ति वारणार्थ
विशेष विज्ञान निवर्त्ती कही॥ सुषुप्ति में अतिव्याप्ति वारणा
र्थ मुद्गरादि प्रहार पद कहा॥ पुनः उत्थान ते मरणका है

५ मरण निर्णय

इस शरीर विषे भोग देनेहारे कर्मोपराम कर द्वय
प्रकार अभिमान निवर्त्तिरूप सपिंडन कर ता समूह

भावीशरीरप्राप्तिपर्यंतमरणावस्था है॥ सामा
न्यहंकार विशेष्यहंकार दोनोंके मध्य जे सुषुप्तिमोंस
मान्यहंकार है पुनः उत्थानतें॥ निराभिमानका पु
नः उत्थान नही होता॥ जाग्रत् स्वप्न दोनोंमों इत्यादि
विशेष्यहंकार रसे है॥ प्रारब्धभोगकूं देकरनष्ट
से तिमरणविषे दोनोंका नष्ट है॥ उभयप्रकार अ
भिमाननिवृत्त किर भावीशरीरप्राप्तिपर्यंत अंतः
करण अज्ञेयका घनीभूत स्थिरावस्था मरण है

ननु सुषुप्तितें उत्थानपुरुषके जैसे सुषुप्तिते पूर्व कीतकर्मका स्मर
ण होता है तैसे मृत्युतें पीछें जन्मांतरप्राप्तिपुरुषके पूर्वज
न्मका स्मरण क्यों नहीं होता है उत्तर यद्यपि सुषुप्तिअव
स्थांतर है तद्यपि उसही शरीरकी स्थितसंतें सुषुप्तिअव
स्थांतर नहीं अरु जन्मांतर अवस्थांतर है सो अवस्थां
तरसंतें पूर्वअवस्थाका स्मरण नहीं अर्थापी जैसे
पुरुषविषे रजतभ्रमके अभावसंतें भोहरभ्रमकालविषे
रजतका स्मरन नहीं है

---

१ गिरि १ परवत्तिर स्तागॅर जोसीमठके उत्
तारखंड में डीनाथमों
१ बन १ अरण्य र गोवर्धनमठ जगन्नाथमों
१ सरस्वती १ पुरी २ भारती ३ ऋंगेरीमठ
२ रुतार्थि ३ [illegible] रामनाथ

१ तीर्थ १ आश्रम २ साधमिठ द्वारकानाथविषे

१ गिरी १ पर्वत २ सागर ३ वन ४ अरण्य ५ पुरी ६
6 अर्थ भाषीये सा है ६ ॥ अनंत संज्ञा
१ तीर्थ १ आश्रम २ सरस्वती ३ अर्थ भार थी
ये सा है तीन स्वामी संज्ञा

॥ न च शोकमोहादिनिमित्तवशादहं समाधिं नाश्रितः येन मम देह
त्यागप्रसक्तिः स्यादित्याह न शोकेनेति मूल न शोकेन न मोहेन
न च वैराग्यचिंतया न देहत्यागकार्येण न संसारभयेन च ८
उत्थान दृष्टवनेपि नराज्यादिनाशादिः शोकहेतुरस्तु कथ
मपलपसि तत्राह मूल एकस्मिन्विद्यमाने हि कुतः शोकः
कुतः स्थितिः कुतो देहः क्व संसारः क्व स्थितिः के भयाभये ८ टी०
एकस्मिन्निति सत्यमत्र दृष्टः न त्वहं तान्मन्ये सहति नन हेतु
को मे समाधिरित्यर्थः ८ उत्थान नहि समाधेस्तको हेतुरिति
चेद्विचारजा विश्रान्तिरेवेत्याह मूल यथैव यैवामलया केवलं
स्वयमुत्थाया एवमेवाहमवसं विनते पावने पदे ९ टी० यथैव
येति एवमेव देहत्यागाद्यभिसंधिं विनैव ९ न च वैराग्यचिंत
येति वैराग्यापन्नो वा न युक्तस्तस्य विचारपूर्वके समाधावनुक्त

7 लत्वादितिचेत्तत्राह मू॰ हाविमुक्तोस्मिसंसारं त्यजामीतीय
मीश्वरः अप्रबुद्धदृशां चिंता हर्षशोकविकारदा १०

H

[illegible]

श्रीरामकृष्णायनमः॥ श्रीशंकराचार्यनवाव
तारं विवेकचूडारं विप्रगुरुं प्रणम्य वेदांतशास्त्र
श्रवणालसानां बोधाय कुर्वे कमपि प्रयत्नं १
इह खलु साक्षात्परंपरया वा सर्वानेव जीवान्स
मुद्दिधीर्षुर्भगवान् श्रीशंकरानात्मभ्योविवि
क्तात्मानं नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभावं संक्षेपेण
बोधयितुं ग्रन्थं प्रणिनाय नचेदंकारस्य
देहेभ्यो विवेकेनाहंकारास्यदमात्मानं सर्वोलोके
हमस्मीति प्रत्येति दुःखं चानुभवतीति तेन ज्ञात
ज्ञापकत्वाभावान्निःप्रयोजनत्वाच्चात्मतत्त्वप्रतिपा
दनं व्यर्थमिति चेन्न नचेदज्ञास्यतेनलोहत्वेनेदं

एवं विवेकेनेति वा

अनात्मभ्यो ५

१रसे०रवि

९

कारास्पदानामपि देहेंद्रियप्राणमनसां प्रतिभा
सतोऽहंकारास्पदत्वेन तदविवेकान्नेनच प्रवृत्तेर्वा
त्मरतेः दुःखित्वाद्यभिमानात् आत्मनीयत्ते वब्र
ह्मात्मैकत्वज्ञानेन समूलस्य तस्य भ्रमस्य नि
वृत्तेः तस्मादस्मात्ज्ञापकत्वात् सप्रयोजनत्वा
च्च आत्मतत्त्वप्रतिपादनं न व्यर्थं तस्य चात्मत
त्वस्य तत्त्वमस्य हंब्रह्माहमस्मीत्यादि वेदांतम
हावाक्यमेव प्रमापकं वाक्यं च तत्त्वंपदार्थज्ञान
द्वारेणैव बोधकमिति तत्त्वंपदार्थयोः पृथक्तत्त्व
केयोर्थानुकूलयोरन्यतोऽसिद्धत्वात् तावपि श्रु
स्यैतौ व प्रमातव्यौ यूपाहवनीयादिपदार्थवत्

तत्र च यतो वा इमानि भूतानि जायंते इत्यादि स
ष्टत्वादिश्रुतयः तत्पदवाच्यार्थस्य समर्पिकाः
सत्यं ज्ञानमनंतं इत्यादयस्तु लक्ष्यस्य एवं तद्य
था महामत्स्य उभयकूले संचरति पूर्वं चापरं च
य इत्याद्या जागरितस्वप्नसुषुप्त्यादिश्रुतयः त्वंपदवा
च्यार्थस्य समर्पिकाः योयं विज्ञानमयः प्राणे
षु हृद्यंतर्ज्योतिः पुरुषः न दृष्टेर्द्रष्टारं पश्येरि
त्यादिश्रुतयः त्वंपदलक्ष्यस्य तेन प्रथममवांतरवा
ते क्येभ्यो नु भूयोः मुमुक्षुजीवब्रह्मणोस्तत्त्वमस्या बंरी
दिवाक्येभ्यश्चाख्यार्थौ च यानुपपद्येते लक्षणया ए पंचमी
च समस्तोपपत्तेः सुषुप्तौ निर्विकल्पकसाक्षि

10

चैतन्यानुभवांगीकाञ्च अद्वितीयब्रह्मस्वरूपेऽज्ञानप्रये
षयाप्रवृत्तानां सत्यत्वसानादिपदानामुपाधिवशा
द् चैतन्ये प्राप्तत्वेऽपि चैतन्यमात्रेतात्पर्येणत्रैवं
नो संस्कारो बोधाख्य इ वृत्तिव्याकारादिपदार्थ
निर्विकल्पकतात्पर्याधीनत्वात् शाब्दप्रवृत्तेः एते
न प्रमितेः प्रमात्रोर्महावाक्यार्थबोधेमानमपा
स्तं असंप्रज्ञातसमाधेः स्मृतेस्मरत्तेस्सेहत्वाच्च
ते परोक्षसद्वितीयत्वाभ्यां च न तत्त्वंपदार्थमा
त्रानुभवादेव कृतकृत्यता वाच्यार्थस्याभेदा
वभासान्नयोनरु न्तं केवलस्यार्थस्य चैकत्वादखं
डार्थतोपरजनस्य च स्मरणास्य निर्विकल्पक

प्रथमः

प्रादिविषेषु कमुखवाराम्भवणकस्येतत्त्व म
सोऽहं सदाकक्रं मननानिदिध्यासनकके
अतेत्वेवबेत्ति सहीकुस्मरन्नकेके स्मंहेडाल्ले

वाक्यानुकूलस्याश्नैर्विकल्पकत्वं अनुभवाद्वे
दाविकंधू सत्वे कल्पकवाक्यार्थबोधेच सत्वे
कल्पकपदार्थोपस्थितेरंगं प्रकृतेचशनैर्विक
ल्पकोवाक्यार्थबोधस्तस्यैवप्रमात्वेनज्ञानत्वे
वस्तीसामर्थ्यात् अतोनतैस्वतावदोर्कमंतरेणा
तत्कारणानुपपत्तेः प्रकृतवाक्यार्थानुकूलपदार्थो
पस्थितेरेवज्ञानस्तिकारणसाध्यत्वात् ननुतर्हि
वेदांतवाक्येभ्यएवपदार्थोपस्थितौवाक्यार्थ
बोधेचसतितस्यस्वतएवप्रामाण्यात्तेनाज्ञानत
त्कार्यनिवृत्त्युपपत्तौरकेरवेचारेणेतिचेत् सत्यंवे
दांता यद्यपिस्वतः प्रामाण्यान्निर्विकल्पकमात्म

साक्षात्कारं जनयंति तथापि मंदबुद्धीनां वादिवि
प्रतिपत्तिजं संशयप्रवृत्तिबंधेनाज्ञाननाशकत्वा
सामर्थ्यात् विचारेण तु संशयनिवृत्तौ स्वेष
वादिसमानाशीनिवर्त्तेदिति संशयबीजभूत
वादिविप्रतिपत्तेर्निराकरणार्थं विचार आरभ्य
ते तत्वंपदार्थप्रथमं विप्रतिपत्तयः प्रदर्श्यंते
त्वंपदार्थस्य ज्ञानस्य तात्पर्यविषयताभ्यर्हित
त्वेपि त्वंपदार्थस्य ज्ञानस्य तन्मोक्षफलभागित
यात्मतोऽभ्यर्हितत्वात् तत्र देहाकारपरिणतानि
चत्वारि भूतान्येव त्वंपदार्थ इति चार्वाकाः चक्षुरा
दीनि प्रत्येकं मेत्यपरे मिलितानीत्यन्ये मन इत्ये

के प्रात्ताइत्तोन्यो हुलिकरवेसानरमेरत्तेसोगत्ता:॥
मून्यरमेरत्तेमाध्यत्मेका: देहेंद्रियानीरदेक्तो देहपदे
मात्ताइत्तिरदेगंबंरा: कत्तभिोक्ताजेओरवेमुररत्ते
रवेब्रूोबकत्तारकैकिप्रभाकरा: जडोबोधात्मक
इत्तेमेदृा भोत्कौ वकेवलबोधात्मक इत्तेसांख्या:
प्रातंजलाप्य श्रुरवेघयाकर्त्तारदेभाक्रूपरमा
त्र्यितोरनेधर्मिक: परमानंदबोधएवेत्तौपरक्षेदा: ज
एवंसामान्यत्तोहंप्रत्ययारसिद्धेरचेदात्मरनेवादरविप्र
त्तिपत्तिभे: संदेशघोहंप्रत्यस्यालेबनंरवेज्ञोपवे
र्णीयायोह भगवानाचार्य: । नभूरमेनत्तीयंनत्ते
जोनवायुर्नरवंनेंद्रियंवाननतेषांसमूह: श्रनैका

४

12 नकर्त्ताँसुखस्यैकस्सेष्टस्तदेको वरिष्ठः शिवः
केवलोऽहं १ अस्यार्थः अहं अहंप्रत्यालंबनं एको
द्वितीयः अवरिष्ठः सर्वद्वैतबाधापबाधितः
शिवः परमानंदबोधस्वरूपत्वेनैव मंगलरूपत्वा
त् केवलः निर्धर्मकः तेनाऽद्वितीयः सर्वप्रमाण
बाध्यः परमानंदबोध एव अहंप्रत्यालंबनं इ
त्वोपनिषदपदं एवं पद्येयानेत्यर्थः एतदुपपा
दनायेन रचारिमत्तानि निराकरिष्यन् प्रथमं
देहात्मवादं निराकरोति न भूमिर्न तोयं न तेजो
न वायुर्न खं मेऽस्ति अत्राहं मेऽस्ति सर्वत्रप्रत्यकं न
भासं बध्यते या भूमिः साऽहं न भवामि योऽहं साभू

मिर्नभवत्तीवेत्तिपरस्परत्वाद्यात्माभावोद्रष्टव्यः यद्य
प्यवादिभिः प्रत्येकं भूमादिरात्मतत्त्वं नाभ्युपेयते सं नेहोऽंगी कारकरने
घातस्यैवतत्त्वरभ्युपगमात् तथापिचेतन्यं तत्त्वं यच्चानंगी
कारात् पंचभूतत्वानभ्युपगमप्रसंगान्नचसंयोगा
दिसंबंधानभ्युपगमात् सहेतुरभावाच्चसंघातो
नोपपद्यते इत्यपरमेप्रत्यप्रत्येकंभूतनैराकरणे
नभूतीकदेहात्मचार्वाकनैराकृतः यद्यपिभूतच
तुष्टयतत्त्ववादिनोमते आवरणाभावत्वेनारंभ
मतस्यास्थिरस्यअसत् आकाशस्यदेहानुपा
दानत्वं तथापिसिद्धांततस्यभावत्वेनदेहोपादान
त्वांगीकारात् तत्रापिआत्मत्वप्रसक्त्यातन्नैराकृते

13 अथ चानवायुरित्यंतमेव देहात्मवादस्य निराकरणं ॥
न खमित्ति शून्यवादस्य खं ब्रह्मेत्यस्य शून्यवाचक
त्वात् नेंद्रियमित्ते प्रत्येकमिंद्रियात्मात्मत्वनि
रासः न तेषां समूह इति समिलितानां भूतानां देहाव
यव्याकारेणापरिणतानामिंद्रियाणां च समेले
तानां निरासः पूर्वं संघातमनुष्यपाणमप्रत्येकं
भूतानि निराकृतानि अधुना तु संघातमभ्युपग
म्यापि निराकृतानीति भेदः भूतनिराकरणेन
भौतिकयोः प्राणमनसोरपि निरासः मनोनिरा
करणेन च मनोवृत्तेः ज्ञानकर्मविज्ञानस्य देहेंद्रि
यकस्य कर्तृत्वभोक्तृत्वाद्येरङ्गीऽस्य च निरासः

कोई के

सिद्धांतेज्ञानेच्छासुखदुःखादीनामंतःकरणाद
न्वयत्वाभ्युपगमात् कामसंकल्पादीनपूर्वकत्वाद
तत्सर्वं मन एवेति श्रुतेः तेन देहमारभ्य केवलमात्म
पर्यंतानां तत्तद्वाद्यभ्युपगतानां अनात्मत्वं प्रतिज्ञा
तं भवति तत्र हेतुमाह अनैकांतिकत्वादिति व्यभि
चारित्वात् स्वेनात्मीत्वात् इति यावत् आत्मनो दे
शकालपरिच्छिन्नत्वात् तत्परिच्छिन्नानां घटादिव देशादि
दनात्मत्वात् तेषां स प्रागभावयोः प्रसंगहेतुमप्याह आत्म
त्वात् अनात्मनां जडत्वात् स्वस्मिन्तस्य चात्मत्वाभा ध्वंस
वात् आत्मन एकत्वेपि सुखदुःखाद्यव्यवस्थानमंतः
करणादीनां भेदाभ्युपगमाद् व्यवस्थोपपत्ते स्वेने

वस्याभावाद् ग्राहको विरोधात् ग्राह्यकाले ग्राहका
सत्वात् ग्राहकसत्वे ग्राह्याभावात् कृतहान्यकृता
भ्यागमप्रसंगाच्च न तस्य ध्वंसप्रागभावौ स्वरूप
स्यात्मनः सर्वत्रानुगमाच्च नाप्यत्यंताभावसंभवः
द्वैतस्य स्वमिथ्यात्वेन तत्तादात्म्यापन्नतयैव संसिद्धत्वा
त् शुक्तिरजतादिवद् ध्वस्तत्वेन तत्तादात्म्याभा
वानुपपत्तेः तेनात्मानाभावप्रतियोगी अभाव
प्रतियोगिन प्रकारेहेंडियांस्यः तेनामीन आत्मा
नः २ किंतु स्वप्रकाशबोधरूपात्वे आत्मन्यद्वैते
ँनो अनिर्वचनीयाविद्या कल्पिता अनिर्वचनीया ए
वेति सिद्धांतरहस्यं ननु बोधरूप आत्मेत्येतन्न वाच्य

परमात् सुषुप्तौ च बोधाभावात् नाहं मूढोहमासं
न किंचिदवेदिषमित्ति सुषुप्तोत्थितस्य परामर्शा
त्कथमव्यभिचारितास्येत्यत्रोक्तमाह सुषुप्तौ क
रणसहित इति अयमर्थः आत्मनः सुषुप्तिसाहित्ये
नैतन्नतरभावः अन्यथा मूढोहमासमित्ति पराम
र्शानुपपत्तेः मातृमानमेयानां व्यभिचारि
त्वेपितज्ज्ञानाभावसाहित्ये कालत्रयेप्यव्यभि
चारात् ननु प्रमात्रयः प्रमातासएव च कर्ताभो
क्ता प्रदीपवत्स्वपरसाधारणः सर्वभासकत्वे
तेन घटादिवत् साहित्यसापेक्ष इति चेन्न स्वविकारि
त्वेन स्वविकारसाहित्यानुपपत्तेः रूपस्य द्रष्टृत्वा

८

15 भावात् प्रमातृप्रपरिणामत्वेन दृश्यत्वात् एकस्य
कूटस्थस्यैव सर्वसाक्षित्वात् एक-कूटस्थोक्तेर्धर्
मिकः साक्षी नाऽप्यन्ते अप्रमाणलोकत्वादिति चेन्न
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं वि
भातीति न दृष्टेर्द्रष्टारं पश्येरित्यादिश्रुतेः अदृष्टो द्रष्टा नान्योतो
ऽस्ति द्रष्टा इत्यादि वस्तावेदान्तप्रमाणराजेन तस्यै
वसर्वसाक्षित्वेनारभेरविक्तत्वात् ननु महदिन्द्र
जाले प्रमाणप्रययात् अकूटस्थानुरोधेहाय कूट
स्थमप्रमाण्यमेव प्रमाणराजो सर्वसाक्षितां
करोतीति इति वाढमिन्द्रजालमेवैतत् स्वप्नवद्बाधा
विलसितत्वात् तथापीदं रूपस्य घटादेरिव जडत्वेन

जपाकुसुमरूपवान् नहीं रूपरहित स्फटिक का गुण है सो गुणों विना प्रतिबिं
बित नहीं होवे है नाकेंकाररूप अरूप का प्रतिबिंब पडे है तैसे ब्रह्म
कथं प्रमाप्रयत्नस्मैत्ते चेन्न रूपरहितस्यैव तस्य स्वच्छ
त्वेन रविरश्मि बिंबग्राहकत्वात् चैतन्यतादात्म्याध्यासा
द्या ननु नीरूपस्य निरवयवस्यात्मनः कथं प्रतिबिं
ब इति चेन्न कात्रानुपपत्तिः रविभ्रमहेतूनां विविक्त
त्वात् जपाकुसुमरूपस्य नीरूपस्य निरवयवा
स्यापि स्फटिके कारणे प्रतिबिंबदर्शनात् घ्राणस्यापि
प्रति घ्राणेरन्या प्रतिबिंबोपलंभात् तयोः संप्रतिप
न्न प्रतिबिंबवेलक्षण्यापातनिरूपं न तथापि इन्द्रिय
ग्राह्यस्यैव प्रतिबिंब इति चेन्न व्यभिचारात् अ
नेन्द्रियग्राह्यस्य साक्षिप्रत्यक्षस्याप्याकाशस्य
जलादौ प्रतिबिंबोपलंभात् अन्यथा जानुमात्र

पुरके अस्ति गंभीरप्रतीतिर्नस्यात् तर्हि अंधस्य
जले प्रतिबिंबं प्रतीयते कुतो न जायते आकाशप्र
तिबिंबस्य सा हि भास्यत्वेपि अरघेण नमहत्त्व
पं च हेतुर्वेपि हरणात् एतेन नीलं नभ इत्यादि भ्रमे
पि च हेतुरन्वयव्यतिरेकौ व्याख्यातौ तत्र सालोक
हॅु स्याकाशस्यारघेणत्वात् तस्माच्चक्षुः प्रतिबिंब
मेव रूपसापेक्षं नान्यदित्यवधेयं तथाप्यात्मनः
प्रतिबिंबे कें मानं रूमेत्ति चेत् श्रुतिं रूपं रूपं प्र
तिरूपो बभूव तदस्य रूपं प्रतिचक्षणाय एकधा
बहुधा चैव दृश्यते जलचंद्रवत् मायाभासेन जी
वीभूतो करोतीत्यादि श्रुतेः स एष इह प्रविष्टः स ए

तामेवसीमानंविभावयिष्यंतियाद्वाराप्रपच्यत तस्सरूपा
तेइदंवानुप्राविक्षत् इत्यादिश्रुतेर्जीवपृथुत्वान्यथानुपप
त्तेः आभासएवच अतएवचोपमासूर्यकादिवदि
त्यादिपारमर्षसूत्रादिश्च तत्रमानानीति तस्यचप्र
तिबिंबस्य सतत्वमेवेति प्रतिबिंबवादिनामभिप्रा
यमेवेत्याभासवादिनः स्वरूपेणनबिंबवादइत्य
न्यदेतत् अचेतनस्वैलक्षण्यंतुतस्य प्रतीतिसिद्धं त्वं
चैतन्यमसिद्धंच तस्मात्सिद्धमंतःकरणप्रतिबिं
बोध्यासद्वारा प्रमातृत्वं ननु अध्यासोपिनोप
पद्यते तथाहि आत्मनिवा नात्माध्यस्यते अ
नात्मनिवा आत्मा नाद्यः तस्यानेः सामान्यवि

ज्ञेयत्वेन सर्वदाभासमानत्वेन साक्षित्वाच्चेश्व
रहितत्वेन चाधिष्ठानत्वासंभवात् नारोपितद्वितीयः
तस्य च मिथ्यात्वाभ्युपगमात् मिथ्यावस्तुनोऽधि
ष्ठानत्वेप्यनवस्थाप्रसंगात् तस्य च सत्यत्वे नर
र्निवृत्तेरनिर्मोक्षप्रसंगाच्च न हि सत्यं कस्यचिन्नि
वर्तते निवर्तमानं च ज्ञानेनानुभूयते श्रुति
श्चैव मिथ्यात्वे हृदयग्रंथिः छिद्यन्ते सर्वसंशयाः
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे
तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पंथाः विद्य
तेऽयनाय तरति शोकमात्मविदित्याद्याः ज्ञाना
त् सर्वसंसारनिवृत्तिं दर्शयन्ति अतः तस्य मिथ्या

श्रुष्प्रमाणेन

त्वे सूचयंति एकमेवाद्वितीयं अतोन्यदार्त्तं नेह ना
नास्ति किंचन अथात आदेशो नेति नेति इत्याद्या
श्रुतेरध्यासासाक्षादेव मिथ्यात्वं प्रतिपादयंति दृ
श्यत्वेन श्रुक्तिरजतवन्मिथ्यात्वानुमानं च आ
त्माध्यस्ततयैवानात्मनो सिद्धेः तत्रात्माध्यासः
अनात्माध्यासेन चात्मनो दोषसाहित्यापत्तिः संभ
वी तत्रानात्माध्यास इत्यात्माश्रयाद्यन्यतमदो
षप्रसंगाच्च एतेनात्मानात्माध्यासस्याविद्याक
त्वान्निर्विकल्पावसर इत्यपास्तं स्वप्रकाशात्मा
न्यत्वे विद्याया अप्यनुपपत्ते तथा हि साप्यध्यस्ता
नध्यस्ता वा तत्राद्ये कथं नात्माश्रयाद्यन्यतमदोष

१०

14

आदिविष
अध्यासक
रणत्वे तदभावाक
रणे तदभावा
की सिद्धे ता
दृश्यत्वेप्र
मातृप्रमे
यादिव्यवहा
आत्मप्र
कपनते
[illegible]

प्रसंगा अंतेतस्यानुच्छेदाच्चनिर्मोक्षप्रसंगः सर्वस्या
ध्यासमूलत्वे च भ्रमप्रमादिव्यवस्थानस्यात् ए
कस्यैवात्मनः प्रमाताप्रमेयप्रमितेःप्रमातृरूप
ता च विरोधा अविरोधाभ्युपगमे च सौगतम
तापत्तेरिति अत्रोच्यते अहं मनुष्यः कर्त्ता भोक्ता
इति प्रतीतिस्तावत्सर्वजनप्रसिद्धा सा च न स्मृ
तिः अपरोक्षावभासत्वात् भेदागमादिकपूर्वक
त्वाच्च नापि प्रमा श्रुतियुक्तिबाधितत्वात् तथा
च श्रुतयः योयं विज्ञानमयः प्राणेषु हृद्यंतर्ज्यो
तिः पुरुषः अयमात्मा ब्रह्म सत्यं ज्ञानमनंतं ब्र
ह्म विज्ञानमानंदं ब्रह्म य आत्मा अपहतपाप्मा

यत्साक्षादपरोक्षाद्ब्रह्म योयमात्मा सर्वांतरः यो
ऽशनायापिपासे शोकं मोहं जरां मृत्युमत्येति स य
त्रैकिंचित्पश्यत्यनन्वागतस्तेन भवत्यसंगो ह्य
यं पुरुष इत्याद्याः श्रु कर्तृभोक्तृपरमानंदस्वब्रह्म
रूपतामात्मनोऽनुवदंति युक्तं च पक्षद्वयेकारि
तां परेशेन मतः परेशितृत्वेनानात्मत्वापत्तेः
स्वेनैव स्वस्यानवलोकने कर्तृकर्मविरोधात् दृग्दृश्य
संबंधानुपपत्तेः भेदेनाभेदेन वा धर्मधर्मिभा
वानुपपत्तेश्च ज्ञानानित्यत्वपक्षे तद्वत्त्वभेद
ध्वंसप्रागभावसमवायज्ञानत्वजात्याद्यभ्युप
गमे गौरवात् एकत्वाभ्युपगमे चास्तिलघिवात्
घटज्ञानं पटज्ञानमित्युपाधिभेदपुरस्कारेणो

वज्ञानभेदप्रतीतेः स्वतस्तु ज्ञाने ज्ञानरमेत्ति एक
रूपावगमात् तदुत्पत्तेरेव नाज्ञप्रतीत्योपक्षाव
इयकल्पस्वविषयसंबंधस्वविषयत्तयाप्युपपत्तेः
ननु उपाध्येपरामर्शमंतरेण स्वत एव घटांत
रात् घटांतरस्य भेदप्रतीतेस्तत्प्रतिबंधमहा
संभवादाकाशाकालादिषु नामत्वेनानात्वपत्ते
क्षकर्तृत्वादेर्वास्तवत्वेस्ते मोक्षप्रसंगात् स्व
प्रकाशज्ञानभ्युपगमे च जगदान्ध्यप्रसंगात् प
रमप्रेमास्पदत्वेन च तस्यानंदरूपत्वात् तस्य निर्ध
र्मकनित्यस्वप्रकाशसुखात्मक एवात्मेत्याशयः
तस्मात्परिशेषाप्रांतिरीयमेत्तेरस्यैते तत्कार
णामपि योग्यं रकैश्चित्कल्पनीयं कल्पमानं च न

= धर्मिअज्ञानतत्प्रति
योगिज्ञानद्वन्द्वेनो
केसमकाल
न[illegible]कर

दात्मन्यध्यस्तत्वेनैव धर्मिग्राहकमानेन तत्सिध्य
तीरत्वेन जानामीत्ति साक्षिप्रतीत्ते सिद्धं अत्वे
वच्छिन्नमज्ञानमेव तत् नचैतस्य भावरूपं ज्ञानस्य
नित्यत्वेन तदभावानुपपत्तेरुक्तत्वात् धर्मप्रत्ति
योगिज्ञानाभ्यां च व्याघातापत्तेः नापि भ्रमसं
न्नायततत्संस्कारपरंपरारूपं अपरोक्षत्वात् अ
तीतानागतभ्रमसंन्नायततत्संस्काराणां च परोक्ष
त्वेन ज्ञातुमशक्यत्वात् आवरणात्मकत्वात् भ्रमो
पादानत्वाच्च आत्मनोऽनैर्विकारत्वात् अंतःक
रणादेश्च तज्जन्यत्वात् देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्नि
गूढां इति श्रुतेर्गुणवत्त्वप्रतीतेश्च मायां तु प्रकृतिं विद्या
त् इत्यादौ मायात्वेः पुररूपईयत्ते अनन्तेनरुहे प्रकृ

ज्ञानाहारेणप्रवृत्ताः भूयपक्षोनेर्थिप्रमाया
न्नैवत्तिः इत्यादिश्रुतेप्रमापारवेद्यात्वस्य वा
च्यमनैर्वाच्यमनृतंतत्वज्ञानन्नैवरूपंचिप्सान
मेवस्वपराध्यासेकारणं नचात्माप्रपादि
दोषप्रसंगः अनादित्वेनतन्निरासात् अना
दित्वेनोत्पत्त्यभावात् स्वप्रकाशात्मनएवएत
द्रूपत्वात् तेनाज्ञानाध्यासवदन्निष्ठचैतन्ये
हंकाराध्यासः नरद्धिद्रोहेचकामसंकल्पादी
नामहंकारस्यधर्माणामिंद्रियधर्माणांचका
णत्वबधिरत्वादीनामध्यासः इंद्रियाणांतुअ
तींद्रियत्वेनपरोक्षत्वात् नपरोक्षधर्माध्यास
इतिसिद्धांतः नरद्धिद्रोहेचस्थूलदेहाध्यासाध

र्मपुरस्कारेणैवाहमनुभवइत्याद्याकारः स्वरूप
तस्तु नाहं देह इत्यध्यासस्तस्याप्रतीत्यभावात् त
द्वितीयोऽपि च स्थूलत्वादीनां देहधर्माणामध्यासः॥
तद्वितीयोऽपि च बाह्यानां पुत्रभार्यादीनां साकल्य
वैकल्यादिधर्माध्यास एवं चैतन्यस्याप्यहंकारा
दिषु देहपर्यंतेष्वध्यासः संसर्गात्मकोध्यास व्यवधा
नेनात्मतस्याप्युपपन्नतारतम्यं तदुक्तं वार्त्तिकामृते
वित्तात्पुत्रः प्रियः पुत्रात्पिंडः पिंडात्तथेंद्रियं इं
प्रियः द्रियेभ्यः प्राणः प्राणादात्मा परः प्रिय इति पिंडं
स्थूलशरीरं प्राणोंतःकरणं देहापेक्षयाचेंद्रि
याणां एव प्रियत्वं शस्त्रवृष्ट्यादिधारापाते च चक्षु
षोर्निमीलनदर्शनादनुभवसिद्धं तेनान्योन्याध्या

साक्षीदृश्यचिद्रूपस्वरूपोध्यासः एकतरस्याध्या
सांमात्रकार्येन्यतरस्याभानप्रसंगात् अध्यस्तस्यै
व भूमेभाननियमात् इमेफुंगारजतेइति समूहाल
बनभमवद्वद्रूपमितिरिताध्यासः सर्वबाधा
वधेमूलचैतन्यपरिशेषेणाचनध्यूनपवादापत्तेः
सत्यानृतसंभेदाभासत्वादध्यासस्य तस्मात्पू
र्वपूर्वाध्यासमूल एवायमुत्तरोत्तराहंकाराद्य
ध्यासो बीजांकुरवदनादिरविद्याध्यासपक्षेके
एवानादिः न त्वध्यासस्यानादित्वेन स्मृतिरूपः
परत्रपूर्वदृष्टावभास इति वर्णिताभाष्यकारेण
स्मृतिरूपत्वेन संस्कारजन्यत्वमुक्तं विरुध्येत

नं कार्याध्यासारंभप्रायत्वात् तस्य परत्र परावभा
सं इत्येतावन्मात्रस्यैवोभयानुगतलक्षणत्वात्
यद्वा सत्यानृते मिथुनीकृत्येति भाष्यकारवच
नात् सत्यमिथ्यावस्तुसंभेदावभासोऽध्यास
इत्येव सिद्धांतलक्षणं तेन कारणाध्यासेऽपि न
लक्षणाव्याप्तिः कार्याध्यासस्य च प्रवाहरूपेणा
बीजांकुरादिवदनादित्वारंभाभावान्न कोपि दोषः
एवमध्यासे सिद्धे एकस्याप्यात्मनो जीवेश्वरा
दिव्यवस्था मानमेयादिप्रतिकर्मव्यवस्था चो
पपद्यते प्रथमं आभासवादेन दर्शयति तथाहे
अज्ञानोपहितोत्मा अज्ञानतादात्म्यापन्नस्य चिदा

भासाविवेकादंतर्यामीसाक्षीजगत्कारणमि
तिकथ्यतेबुद्ध्युपहितचैतन्यंतत्तादात्म्यापन्नस्वचि
दाभासाविवेकात्जीवःकर्त्ताभोक्ताप्रमातेति
चकथ्यतइतिवार्त्तिककारपादाःप्रतीतेदेहेचबु
द्धीनांभिन्नत्वात्तद्गतचिदाभासभेदेनतद्विवे
कंचैतन्यमपिभिन्नमिवप्रतीयतेअज्ञान
स्यतुसर्वत्राभिन्नत्वात्तद्गतचिदाभासभेदा
भावात्तद्विवेकसाक्षिचैतन्यस्यनकदाचि
दपिभेदभानमितिअस्मिन्पक्षेतत्त्वमस्या
दिपदेषुजहल्लक्षणातौवसाभासस्योपाधेर्वाच्या
र्थस्यहानात्आभासस्यापिजडाजडविलक्ष

तात्वेनानिर्वचनीयत्वात् तउक्तं संक्षेपशारीरके॥ सा
भासाज्ञानवाचीयदि भवति पुनर्ब्रह्मनिष्ठाएतस्तथाहं
ब्रह्मेहं कारवाची भवतिचेज्जहल्लक्षणा तत्रप
क्षेइति न चाभासस्यैव बंधत्वात् केवलस्यचैतन्य
स्यमुक्तत्वात् बंधमोक्षयोर्वैयधिकरण्यं स्वनाश्रा
र्थप्रवृत्त्यनुपपत्तेः प्रसरतेवाच्यं केवलचैतन्यस्यै
वाभासद्वारा बंधत्वाभ्युपगमात् तउक्तं वार्ति
ककारपादैः अयमेव हि नोनर्थोयत्संसारात्मा
तमदर्शनमिति तेन प्रभुचैतन्यस्याभास एव
बंधः तस्यैवातिप्रसरमोक्षइति नरके चिरसंसमे
जसे अथवा आभासाविवेकं चैतन्यमरपितत्व

मस्यापिपरवाच्यं तेन वाच्यैकदेशस्य त्यागास्मि
न्नपिपक्षे जहदजहल्लक्षणौ [illegible] वेत्तेन को विशेषः
अयमेव च पक्षः आभासवाद इति गीयते अज्ञा
नोपहितं बिंबचैतन्यमीश्वरः अन्तःकरणतत्सं
स्कारावच्छिन्नाज्ञानप्रतिबिंबितं चैतन्यं जीवः अज्ञा
नानुपहितं चैतन्यं शुद्धं इति विवरणकाराः
अज्ञानप्रतिबिंबितं चैतन्यमीश्वरः बुद्धिप्रति
बिंबितं चैतन्यं जीवः अज्ञानोपहितं तु बिंबचै
तन्यं शुद्धमिति संक्षेपशारीरककाराः अ
नयोपक्षपक्षयोर्जीवनानात्वं बुद्धिभेदात् प्र
तिबिंबस्य च पारमार्थिकत्वात् जहदजहल्लक्ष

तोपलक्षितत्वमस्यादिपदेषु इममेवकूचप्रतिबिंबेवा
दमाचक्षते अज्ञानविषयीभूतंचैतन्यमीश्वरः
अज्ञानाश्रयीभूतंचजीवइतिवाचस्पतेरभि
प्रायः अस्मिंश्चपक्षे अज्ञाननानात्वाज्जीवनाना
त्वप्रतिजीवंचप्रपंचभेदः जीवस्यैवस्वाज्ञानो
पहितत्तयाजगदुपादानत्वात् प्रत्यभिज्ञानसा
हेभ्रपात् ईश्वरस्यचप्रपंचजीवाविद्याधिष्ठान
त्वेनकारणत्वोपचारात् इति अयमेवचावच्छे
दवादः अज्ञानोपहितंबिंबचैतन्यमीश्वरः अज्ञा
नप्रतिबिंबितंचैतन्यंजीवइतिवा अज्ञानानुपहि
तंशुद्धंचैतन्यमीश्वरः अज्ञानोपहितंचजीव

१६

24

वा

इतिमुख्योवेदांतसिद्धांतएकजीववादाख्यः इ
ममेवचदृष्टिसृष्टिवादमाचक्षते अस्मिंश्चपक्षे
जीवएवस्वाज्ञानवशाज्जगदुपादानंनिमित्तं
चदृश्यंचसर्वंप्रातीतिकंदेहभेदाच्चजीवभेद
भ्रांतेःएकस्यैवचस्वकल्पितगुरुशास्त्राद्युपबृं
हितश्रवणमननादिदार्ढ्यात्आत्मसाक्षात्का
रेसतिमोक्षः शुकादीनांमोक्षश्रवणंचार्थ
वादः महावाक्येचतत्पदमनंतसत्यादिपदव
दज्ञानानुपहितचैतन्यस्यलक्षणयोपस्थाप
कमित्याद्यवांतरभेदाऊहनीयाः ननुवस्तुनि
विकल्पासंभवात् कथंपरस्परविरुद्धमत

प्रामाण्यं तस्मात्किमेव हेयं किमुपादेयमिति चेन्न
क एवमाह वस्तुनि विकल्पो न संभवतीति स्थाणुर्वा
पुरुषो वा वाराहः सो वा इत्यादि विकल्पस्य वस्तुन्यपि
दर्शनात् ननु भवतात्त्विकी सा कल्पना पुरुषबुद्धिमा
त्रप्रभवा इयं तु शास्त्रीया जीवपक्षरक्षे भागादि व्यव
स्थेति चेन्न नूनमसि मेधावी भवान् यदुद्धृतीयात्मना
त्वं हि प्रधानं फलवत्त्वात् सांतत्वाच्च प्रमेयं शास्त्रस्य जी
वेप्सरक्षे भागादि कल्पना तु पुरुषबुद्धिमात्रप्रभ
वा अपि शास्त्रेतानूद्यते तत्त्वज्ञानोपयोगित्वात् ननु
पुरुषबुद्धिमात्रप्रभवस्य कथं प्रत्यनुवाद इति चे
न्न दाह फलवत्संनिधावफलं तदंगमिति न्यायात् अम

[illegible]

१७

25

स्सिद्धास्याविरोधश्रुत्यानुवादसंभवात् एतेन द्वैतज्ञाने
नाद्वैतज्ञानस्याबाधोन्नेयस्तः घटादिद्वैतज्ञानस्या
पि अप्रमात्वसमापत्तौ द्वैतप्रामाण्याभ्युपगमाच्च
ज्ञानाज्ञानयोः समानाश्रयविषयत्वनियमात्
जडे च प्रमाणाप्रयोजनयोरभावेन अज्ञानानंगी
कारात् तत्स्वरूपे च चैतन्याज्ञानादेव तत्राप्यज्ञान
व्यवहारोपपत्ते प्रमाणस्य चाज्ञातज्ञापकत्वप
त्वात् अन्यथास्मृतेरपि तदापत्तेरिति वेदांतेषु
सर्वत्रैवं रघेधविरोधेऽप्येवं परिहारः तदुक्तं वा
र्त्तिककारपादैः ''यथायथाभवेत्पुंसो व्युत्पत्तिः
प्रत्यगात्मनि'' सा सैव प्रक्रियाज्ञेया'' साध्वी सा च

व्यवहार इति चापाठः

२

व्यवस्थेतीति प्रवृत्तितात्पर्यविषयीभूतार्थविवक्षं
त्वं हेयमेवेति ज्ञातत्वात् उद्दिष्टेनमस्माभिः तस्मा
न्नैरकैश्चिदेतन्न विरुध्यते एवं जीवस्योपाधेनारभि
भूतत्वात् संसारोत्पत्तिरुच्छिः परमेश्वरस्य तूपा
धिं वरिष्ठत्वात् सर्वसत्वादेकरमेति सम्यगुप
पद्यते व्यवस्था ननु भवत्वेवं व्यावृत्तात् जीवेश्व
रविभागव्यवस्था मानमेवात्र प्रतीकैर्मव्यवस्था
तु केयं परमेश्वरेते चेदुच्यते द्वयप्रत्यादेनाज्ञोत्वाद्व्यप
दिष्टोऽन्याप्यवैधारण्यानिर्वचनीयत्वेन वैचारा
सहत्वपरत्वाविहेपज्ञारक्षेरूपवतीसर्वाणिनंखेद्य
मानेमावरणेति मंगलेश्वेवनयनपुरःस्थिता

१९
26

ब सूर्यमंडलं तत्र च बहुरुपावरणांगुलैरप्यभानप्र
संगात् आधेयानावरणमंतरेण। वेहेपानुपपत्ते प
श्च तत्र सापूर्वपूर्वसंस्कारजीवकर्मप्रयुक्तास
तीनैर्वलजगदाकारेण परिणमते सा च स्वगत
श्चिदाभासद्वारा चित्ताद्रात्म्यापन्नेति तत्कार्यमखिल
सर्वमाभासद्वारा चिदनुस्यूतमेव तथा च चैतन्या
स्पर्शापवत् स्वसंबंधसर्वाविभर्सिकत्वाज्जगदुपा
दानं चैतन्यं प्रमाणापेक्षामंतरेणैव सर्वं सर्वदा
न [illegible] भासयति सत्सर्वज्ञं भवति तेन न तत्र मानमेया
दि व्यवस्था किंतु जीवचैतन्यस्य बुद्ध्यवच्छिन्नत्वेन प
रिच्छिन्नत्वात् तेन स्वेतरमभिव्यक्ते योग्यानयनयेनां

अन्यशरीरस्य सुखदुःखादि
सांनत्वाभावाच्चेन्न सांकर्यं २

तःकरणेन यदा यत्संबंधं भवति तदेव तद्गत इव हि
८ त्रिजीवोनुभवति तेन न सांकर्यप्रसंग एवमत्र प्रक्रिया ॥
शरीरमध्ये स्थितः सर्वशरीरव्यापकः सत्वप्राधा संपूर्ण
न्येन सूक्ष्मपंचभूतारब्धोंतःकरणाख्यो देहादि शरीर
वत्स्थिरतरादिवस्तित्ववद्यानेत्रादिद्वारा निर्गत्य यो विच
ग्यान् घटादिविषयान् व्याप्य तत्तदाकारो भवति
द्रु उतताम्रादिवत् तस्य च सौरालोकादिवत् ऊरटे
त्येव संकोचविकासावुपपद्येते सच सावयवत्वात् व
दीर्घमानो देहाभ्यंतरे घटादौ च सम्यक् व्याप्य दे ष्प
हघटयोर्मध्येपि च तन्तुवद् अच्छिन्नो व्यवतिष्ठते तत्र दे
हावच्छिन्नांतःकरणभागोहंकाराख्यः कर्तेत्युच्य
ते देहविषयमध्यवर्ती दंडायमानस्तद्भागो वृत्ति

र्त्तीनाख्याः केचित्तु उच्यते विषयव्यापकस्तादृगो विष
यस्य ज्ञानकर्मत्वसंपादकः स एवाभिव्यक्तियोग्यत्वा
दमित्युच्यते तस्य चान्तर्भागस्यान्तःकरणस्यात्ति
स्वच्छत्वात् चैतन्यं तत्राभिव्यज्यते तस्याभिव्यक्तस्य
चैतन्यस्यैकत्वेनाभिव्यंजकान्तःकरणभागभे
दात् त्रिधा व्यपदेशो भवति कर्तृभागावच्छिन्नश्चि
दंशः प्रमाता इत्युच्यते वृत्तिभागावच्छिन्नश्चिदंशः
प्रमाणं विषयगतयोग्यत्वभागावच्छिन्नश्चि
दंशः प्रमेयमित्युच्यते प्रमेयं तु विषयगतं ब्रह्म
चैतन्यमेवाज्ञानान्तरेकच स्मान्तस्तत्फलं कथं चाप
रस्मेयहेतः करणावच्छिन्नो जीवः यास्मेपप

पक्षे सर्वगतोऽसंगोऽविद्याप्रतिबिंबो जीवः तत्रोभय यस्मिन्पक्षे अंतःकरणावच्छिन्नो जीवः तस्मिन्पक्षे प्रमातृचैतन्योपरागार्थांतःकरणवृत्तिरावश्यकीति रव्या
थापि प्रमातृचैतन्योपरागार्थो विषयगतचैतन्या
वरणभंगार्थश्चांतःकरणवृत्तिः तस्मिन्पक्षे अ यस्मिन्
विद्यावच्छिन्नः सर्वगतो जीव आवृतस्तस्मिन्पक्षे
जीवस्यैव जगदुपादानत्वेन सर्वसंबंधित्वादाव
रणभंगार्था वृत्तिरिति विवेकः ननु स्वच्छे उपरागा
र्था वृत्तिरिति पक्षे स्वतोऽन्तःकरणासंबद्धानां धर्मा
धर्मादीनामंतःकरणावृत्तेमंतररूपो व सर्वदाभा
नं स्यात् न स्यात् चैतन्यस्य तदाकारत्वाभावा
त् तदभावश्च स्वच्छेपि प्रवृत्त चैतन्ये आवरणात्
तेन भानं न स्यात् अनावृतेपि शुक्तिरजतादाव
स्वच्छत्वात् धर्माधर्मादौ च स्वच्छत्वादावृतत्वाद्वा

२० न भानं स्यात् तेन स्वच्छोऽप्यावृते प्रमाताऽन्यात्तदाकार
28 ताऽज्ञानावृत्तेऽपास्वच्छेऽप्युक्तेरजतज्ञानाद्यावच्छेदावच्छ्या
तदाकारता अज्ञानावृत्ते स्वच्छे तु सुखदुःखादौ स्वत
स्तैनांतःकरणसंबंधमात्रेणाभानप्रसंगः
ननु प्रस्मरणः कथं आवरणं नैरविघस्वप्रकाश
त्वेन सर्वज्ञत्वात्सत्यं स्वसंबंधसर्वभासकत्वया
सर्वज्ञमप्यंतःकरणावच्छे जीवाज्ञानविषय
त्वाच्च तस्मैत्तेऽप्युपदेश्यते तस्मादज्ञानोप
हानस्मैत्तेपहेत्वे उपरागार्थावरणभंगार्थी
च वृत्तेः जीवोपादानत्वपक्षे तु आवरणभंगा
यैव न चैवं नैव घटादिज्ञानेनावरणस्यभंगो
स घो मुक्तेप्रसंगः अज्ञानस्यैकत्वान्नानाज्ञा

नपरिणामिकस्यैव जीवस्यैक्यज्ञानेनापबाध्यत्वात् इति
चेन्न उत्पत्तिकत्वेन मतोरेवं च त्यावरस्यारंभ
वांगीकारात् तथा च घटमात्रजन्यांतःकरणवृत्य
भावसहकृतेन ज्ञानं सत्तैभात्यापेक्षवस्तुनैना
स्तीति न भातीति प्रतीतेजननसमर्थमावरणमेतु
च्यते वस्तौ ज्ञानाज्ञायांत्वेव ह्रेरकाभावाद्विद्यमान
मप्यविद्यमानसममेवेत्ते न स्वस्वकार्यसम
र्थमज्ञानं तेनारभ्येभूतमेत्युच्यते नन्वेवं सत्तेव
स्मिज्ञानेनाप्यविद्यायाः कारणैव वेरनेमोहि प्र
सोतः नैतत्वमस्यादिवाक्यार्थज्ञानादविद्यानि
वृत्यभ्युपगमात् स्वस्वविषयघमात्वेनैवाविद्या
निवर्तकत्वात् महावाक्यार्थज्ञानस्यैवाबाधि

संबंधके
अभावतें
विद्यमान्
हूं ब्रह्मत्र
विद्यमान्
समहोता
है

२१

29

तद्विषयत्वाप्रमात्वात् ननु ब्रह्मज्ञानात्पूर्वं तस्या
प्रमात्वे जगति तेप्रमाव्यवहारो न स्यादिति चेत्तथा
हि प्रत्यक्षादौ नांतु बाधितविषयतया भ्रमत्वेऽपि
व्यवहारसमये निप्रमात्वाभिमानात् ननु ज्ञा
नादज्ञाननिवृत्तेरन्यथादृढनिश्चयेति चेत्तत्राह॥
ज्ञानादज्ञाननिवृत्तेरन्यथादृग्निश्चयादिकं चेत्क
रस्यानुभवसिद्धत्वात् परोक्षज्ञानेनाज्ञाननिवृ
त्तेस्त्वेन स्याज्जीवन्मुक्तस्यैव न स्यात् अन्यथा
प नुपपत्तेः सर्वतो बलवत्वात् तदुक्तं अन्यथानु
वस्तु पपत्तेः प्रदेरस्ते प्रसाधिकारेन एवं दृष्टश्रुतौ से
वे सर्वबलाधिकाति अथवा मूलाज्ञानस्यैवाव
व३ म२

अज्ञान ज्ञान के प्रा
गभाव का नाम है ॥
समत्न मानने कर

स्यात् ज्ञाननाशने घटादिविषयावरणनाशने अज्ञानस्य
ज्ञानप्रागभावस्थानीयत्वेन प्रावरत्वे ज्ञाननाशेना
वेत्य ज्ञाननाशने इत्यभ्युपगमात् एकेन च ज्ञानेन न
एकाज्ञानस्यैव नाशनात् घटादिज्ञानेनावरणा
नीवृत्त्येन काप्यनुपपत्तेः ननु अनुमानादि
भिरावरणानिवर्त्यैनवा अपरोक्षसाक्षात्कारभ्रम. तो
स्यापि रज्जुआदावनुमानादिनाशने वर्त्तेः प्रसंगात् ना
द्रांतवपीतत्वादिः ध्वेतत्वाद्यनुमानादिनाशने वर्त्ते प्र
संगः अपरोक्षज्ञानोपादानकत्वेन [illegible] भ्रो
मस्यानानिवर्त्तौरभिवर्त्तेः यौक्तिकज्ञानेन च भ्रमत्व
स्पष्टविद्यानिवर्त्तेः साक्षात्कारार्थं व्यवहारमनना
द्यपेक्षानस्यात् रत्नलयचक्षुरादिव्यवहारानस्या

तु प्रतिबंधस्य विद्यमानत्वात् उच्यते एवंविधमा
वरणं एकमस्त्यापादकमंतःकरणावच्छिन्न
साक्षिणि एवं अनावरणभानापादकं विषयावच्छिन्न
चैतन्ये एवं घटमहं न जानामीत्युभयावच्छेदा
नुभवात् तत्राद्यं परोक्षापरोक्षसाधारणज्ञान
मात्रेण निवर्तते अनुमितेऽपि वह्न्यादौ नास्तीति
प्रतीत्यनुदयात् द्वितीयं तु साक्षात्कारेणैव निव
र्तते यदापरोक्षं विषयाकारं ज्ञानं तदा प्रयत्नसाका
रमप्रमानं नावृणोतीति नियमात् परोक्षज्ञानस्य
च विषयेऽपरसन्निकर्षाभावेनांतःकरणमा
त्रोपपन्नत्वात् अपरोक्षज्ञानस्यैव विषयेऽपरस
न्निकर्षव्यापारजन्यत्वेन विषयांतःकरणजन्य

त्वेन तदुभयत्र नैष्फल्यात् तदुक्तं परोक्षज्ञानतो नश्ये
दसत्त्वावरणहेतुता अपरोक्षधिया नश्येदभाना
वरणहेतुता इति तेनानुमानादसत्त्वावरणनाशा
त् तद्व्यवहारः अभानावरणस्यैव तस्याश्च सोपाधि
कसाक्षात्कारे भ्रमनैवर्त्तेतेति तस्मान्निर्धर्मि
कस्याप्यात्मनो विद्ययांतःकरणतादात्म्याध्या
सात्तद्धर्मकर्तृत्वभोक्तृत्वाद्यध्यास उपपद्यते न
तु त्वन्मते अनिर्वचनीयख्यात्यभ्युपगमात् ये क
र्तृत्वादयोंतःकरणधर्मा आत्मन्यध्यस्यंते ते
अनिर्वचनीयास्तत्रोत्पद्यंत इति वाच्यं तथा च व्याव
हारिकप्रातिभासिकभेदेन कर्तृत्वभोक्तृत्वादि

॥००

नांबुद्धिधर्मत्वेभासः स्यात् न स्यात् तादात्म्याद्भ्रमा
त्मनाविवेकात् सकलधर्मविशिष्टस्यैवात्मनःकर
तृत्वस्यात्मन्याध्यस्तत्वेनबाधाभावात् तस्मादेक
स्यैवात्मनः उपाधिभेदेनप्रमात्रादिभेदव्यवस्थो
पपत्तेः नसौगतप्रसंगापत्तिः नवाविरोधः अन्यथा
पिव्यवस्थाः स्वप्नदमुपदेशउपपादयिष्यंति
तस्मात्जीवरूपस्यात्मनः सुषुप्तावव्यभिचारि
त्वाद्देहेन्द्रियादीनांचव्यभिचारित्वाद्रूपत्वाच्चने
त्रेतेआत्मबुद्धेस्तेषांवादिनांभ्रांतिः अत्रोपनिष
१ दमेवमतंप्रमाणमित्युक्तंसिद्धं ननुस्यादेतत् आ
त्मनोऽनेकधर्मकत्वेप्रमात्रादिव्यवहारस्याध्यास

मूलत्वे च व्यासनरागोयज्जैते त्येवमादीनां श्रुतिस्मृतीनाम
प्रमाण्यप्रसंगः अकर्तुः अभोक्तुरप्यात्मनः प्रवृत्त्य
नुपपत्तेः वेदाप्रमाणत्वेन कुतोऽस्मत्सिद्धिरिति तस्य
तन्मात्रगम्यत्वात् श्रुतिस्मृत्योर्जैत्वादिति न्यायात्
तेषां च वेदप्रामाण्याय प्रमात्रादिव्यवहारस्यास
त्यत्वमभ्युपेयं इत्याशंक्याह किं तत्त्वज्ञानात्पूर्वमप्रा
माण्यमापाद्यते उत्तरं वा तत्राद्ये सर्वेषां प्रमाणा
नामविद्यावद्विषयत्वेन तद्दशायां बाधाभावा
त् २नैःप्रत्यूहप्रामाण्यं द्वितीये त्वेष्टापत्तेरेवे
त्याह॥ ॥ न वर्णा न वर्णाश्रमाचारधर्मा न
मे धारणाध्यानयोगादयोऽपि अनात्माश्रया
हंममाध्यासहानात्तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहं

२९

32

२॥ वर्णाः ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राः आश्रमाश्च 2
ब्रह्मचारीगृहस्थवानप्रस्थभिक्षवः आचाराः
स्नानशौचादयः धर्मा ब्रह्मचर्यगुरुसेवादयः।
अत्र हेतुरूपगर्भविशिष्टेन पुरुषेण वर्णानामाचा
राधर्मादिश्चाश्रमाणामप्याचाराधर्मादयः लभ्यं
ते, धारणा बाह्यविषयत्यागेन मनसः स्थैर्यं ध्या
नं परमात्मचिंतनं योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः आ
दिशब्देन श्रवणमनननादयो गृह्यंते सर्वेषां ज्ञाने
ऽरकालमसत्त्वहेतुमाह अनात्माश्रयाहं ममाध्या
सहानाच्च अनात्मा आत्मविरोधिनश्च वेदांतरा
श्रयस्तु उपादानो योऽहंकारममकाराद्यध्यासः

२
तस्यस्वमूलस्याऽपितत्वज्ञानेनहानात्तत्प्रयुक्त
वर्णाश्रमाऽदिव्यवहारोनास्तीत्यर्थः॰ वर्णाश्रमाऽ
दिव्यवहारस्याऽमेध्याज्ञानमूलत्वेनऽमेध्यात्वेऽ
ऽप्यनुतच्चतेरके सुषुप्तौ व्याप्तेरकमाह २ नमा
ताऽपितावानदेवानलोकानवेदानयज्ञानतीर्थे
ब्रुवंति सुषुप्तावेरस्ताऽते शून्यात्मकत्वात्तदे
कोऽपरस्त्रीणः ऽस्त्रीवः केवलोहं ३ माताऽजनकस्त्री 3
ऽपिताजनकःपुमान देवाऽइंद्रादयः आराध्याः
लोकास्तदाराधनफलानिस्वर्गादीनिवेदालौके
कप्रमाणप्रतिपन्नरहितार्हितसाधनताप्रतिपा
दकानिब्रह्मप्रतिपादकानिचेपौरुषेयप्रमाण

वाक्यानि यज्ञाः स्वर्गादिसाधनभूताः ज्योतिष्टो
मादयः तीर्थयात्रादिसाधनीभूताः कुरुक्षेत्रादिदे
शाः एवं पापकर्मसाधनान्यपि उपलक्षणीया
नि सर्वविधोऽहमभिमानमूलत्वात् तदभावस्वतः
संबंधाभावविद्यमानेत्यर्थः तथा वस्तुष्वपि
प्रकृत्यनुवृत्तेः अत्र पितापिता भवति मातामा
ता लोका अलोका देवा अदेवा वेदा अवेदाः स्तेनोऽस्तेनो भ
वति भ्रूणहा अभ्रूणहा चांडालोऽचांडालः पौल्क
सोऽपौल्कसः श्रमणोऽश्रमणः तापसोऽताप
सः अनन्वागतं पुण्येन अनन्वागतं पापेन तीर्णो
हि तदा सर्वान् शोकान् हृदयस्य भवतीत्याद्यग्र

रभिमानाभावे सर्वानर्थनिवृत्तिमनुवदंति ननु सर्व
व्यवहाराभावे शून्यतैव स्यादित्याह निरस्तेति शू
न्यात्मकत्वादेरिति निरस्तं शून्यात्मकत्वं यस्मा
द्योधाभावप्राप्तानो निर्दिष्टः तस्य सुषुप्ते साधक
त्वात् पुनरुत्थानानुपपत्तेश्च शून्यत्वेनाभिमता श्रु
न्यथमात्मानुरक्तस्थितेः धर्ममात्रासु संसारस्त्वस्य भव
ति यदैतन्नोपपद्यते तदपि वैतन्नोपपद्यते न रक्षेदस्य द प
देश्चैव परिलोपात् वे घटः स्वेनात्मनात्वा मेतु रक्षेतीयम
स्ति तत्तो न्यः रक्षिमत्कं यत्त्यनुपलब्धेः सा रक्षिप्तस्तत्र अथवा
त्म चेतन्यस्य न सुषुप्तौ शून्यतेत्यर्थः निराकृतम
व्याततस्पृष्टा निरवनन्नायेन पुनरपि निराके

यतो यद्धात्रेरत्तमनुप्रानया यतीत्ते मार्देत्तायरमे
त्तिपमूर्त्तार्नेर्धर्मकं यद्भूतंत्तसांमकावात् तथाच
श्रुतिः यत्रावैपुरुषः स्वपेत्ति नाम सत्ता सोम्य
तदासंपन्नोभवत्ति यथप्रियाप्रिययास्त्रियासंप
रिषक्तोनबाह्यंकिंचनवेदनांतरमेवमेवायंपु
रुषः प्राज्ञेनात्मनासंपरिष्वक्तोनबाह्यंकिंचन
वेदनांतरमित्तितेनजगत्ताकारत्ताभूत सर्वद्दि
सर्वज्ञात्केपरिपूर्णानिरबोधरूपेणाभ्रमात्रं
२ सहैकत्वात्संसारोजीवस्तस्येसिद्धं एवं तावत्त
त्तिर्भिः पक्षैकेवद्विवेप्रतिपत्तिरनेरकरणापूर्व
केत्वेपदार्थपरिनिर्धारितः सेप्रतित्तत्पदार्थः तथे

वस्नेर्धारणयेतन्यास्तत्त्वदर्शनेनकार्यावासुदेवप्रति
पत्तौयोज्यप्रदर्शयंति ननुब्रह्मणस्सहजीवस्यैकोना
म्नुपपद्यते तथाहि तद्धश्वा चेज्जगत्का रणाद्ब्रह्म
सदेवसोम्येदमग्रआसीदित्यादिवाक्येनप्रति
पादितंजगत्कारणंचप्रधानमचेतनमितिसां
ख्याः पप्युपरतेरेवजगत्कारणंसचेतनोपिजी
वाङ्गेनस्तत्रुपास्यएवइतिपाशुपताः भगवान्
वासुदेवईश्वरोजगत्कारणंतस्माज्जायते सं
कर्षणाख्योजीवः तस्मान्मनः प्रद्युम्नः ततोहंकारो
निरुद्धः तेनकार्यत्वाज्जीवस्यतेनसहब्रह्मणोवासु
देवस्यात्यंतभेदइतिपांचरात्रिकाः परेरामीति

तः सर्वज्ञात्मेन्नात्मेन इत्ते जैनाः २ बौद्धैन प्रधाना
त्ति सर्वज्ञत्वाद्युपेतं ब्रह्म आम्नायस्य तत्के वा प
रत्वेन तत्र तात्पर्याभावात् २ केचित्तु वागधेन्वारइ
त्सर्वज्ञा वारइदं एता जगत्कारणं परमात्मा वारइ वी
जीवो वा उपास्य इत्ते मीमांसकाः अपरेत्तेन ज्ञा
ज्ञानात्मान ईश्वरः सर्वज्ञ इत्यपर आर्हिका यलि
गानुरूपेतः स च जीवाद्भिन्नो वेत्तितारकिंकाहत्तो
करवैज्ञानं सर्वज्ञ इत्ते सौगताः केचित्कर्मरवैपा
कान्त्यायेर परामृष्टो भसंस्पृष्टः पुरुषविशे
षो नित्यज्ञानस्वरूपः प्रधानं आसत्वगुणात्प्रति
फलितेन यासर्वज्ञः संसारे पुरुषविशेषरूप

एवं प्रचुर हस्ते पातेजलाः अद्वितीयपरमात्मने एव
ऐतत्तत्त्वज्ञानी वस्य वास्तवं स्वरूपं मायया च सर्व
सत्वात् स्वैर वैलक्षण्यं जगदुपादानं तस्मिन्मे तं चेत्सोप
निषदः एवं वास्तवे प्रतिपत्तेभिः संस्के चेतत्त्व
रायै औपनिषद्रूपं परीक्षणे तस्मै राया ४
पाहुभगवान् । नेसांख्यं नयौवं न तत्वं चिरात्रे
नजैनं न मीमांसकादेर्मतं वा विशिष्टानुभूत्या
रवेप्रधात्मकत्वात्तदेको विशेषः स्वीयः केवलो
हं पुं अद्वितीयेनानुक्तानां परंगतः नतावदस्यैव
नेजगदुपादानं तदेहन्त ब्रह्मस्यां प्रजायेयेत्ति ई
क्षणपूर्वकसृष्टिप्रवर्तनात् अनेन जीवेनात्मना

नुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणीति इति च जीवा
त्मत्वेन परेणात् येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतम
विज्ञातं विज्ञातं इति चैकविज्ञानेन सर्वविज्ञानं प्रति
ज्ञानात् यस्मिन् विज्ञाते सर्वं विज्ञातं प्रधानज्ञानेन च
तदाप्राकृतिकानां पुरुषाणां ज्ञानुमशक्यत्वात् ए
तदात्म्यमिदं सर्वं तत् सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वे
तकेतो इति च तस्मिन्नेवैकत्वउपदेशात् तस्मा
द्वा एतस्मादात्मनः आकाशः संभूतः इति श्रुत्वात
ते रात् अचैनस्य जगत्कारणत्वे रचनानुप
पत्तेः प्रधानमहदादेरप्रामाण्यलौकिकत्वाच्च न सांख्य
मतं साधु॥ एवं पाशुपतं पांचरात्रिकं जैनं च मतं

क्रुरित्युक्ते बाधे न त्वाद्युक्तं न च रवे बाधेत्रोषाचात्प्र
त्तेर्नत्रितलपूत्तेपाद्यत्तीत्ते मीमांसकमते युक्तं क्रास्से
धत्वाद्विधेत्रोषत्वस्य न चार्थवादाधिकरणान्याया
द्विधेत्रोषत्वं वैषम्यात् स्वतःप्रयोजनवदर्थप्रति
पादकानां वायुर्वै क्षेपिष्ठा देवतेत्येवमादीनां स्वाध्या
यविध्यालहराणान्यथानुपपत्त्याप्रयोजनवदर्थपर
त्वे कल्पनीये ग्राए भावनेतिकर्तव्यताकांक्ष
स्य विधेः सेप्रशानभूतं देवताविस्तुतिद्वारेणानंदेश
पूरकत्वादिति एप्रशस्यं मपन्यायेन तदुभयैकवाक्य
तैतपर्थः वासार्धिकरणेनैसीनं वैद्वास्तवाक्यजन्य
तोनाक्ष साक्षाद्देवपरमानंदप्राप्तिर्लिंः प्रोपक्रं स्व

स्निवर्त्तेश्च पुरुषार्थो लभ्यते नैराकांक्षत्वात् नान्यशे
षत्वसंभावना। प्रत्युत विधय एवातः कर्मणामुपदेशका
रत्वाद्विशेषतां भजंते इति तस्मात्प्रयोजनवद्बाधितं
ज्ञानज्ञापकत्वेन वेदांतानां स्वत एव प्रमाण्या इत्ये
क वं ब्रह्मेति न मीमांसकमतसिद्धेः तार्किकादीनां च म
तेनैत्यमात्मैव हं ब्रह्मास्मि अयमात्मा ब्रह्म सत्यं ज्ञानम
नंतं ब्रह्मेत्यादि श्रुति बाधितं एकमेवाद्वितीयं नेह ना
नास्ति किंचनेत्यादिश्रुतिबाधितं च इमेन्द्वारभेत्तत्वं
देहलीकत्वं च आकाशवत्सर्वगतश्च नित्यः इत्यादि
श्रुतिबाधितं अत्र च सर्वेषां मतस्यासत्त्वे प्रतिज्ञा
नैरर्थक्यमुखाभ्यकत्वादि इति हेतुः एते एव विकल्पकारहिती

यच्चैतन्यरूपत्वादित्यर्थः अत्र हेतुः स्वरूपेणानुभूत्येति
स्वरूपेण सर्वविकल्पकानुभूतिभ्यो व्यावर्तयति तत्त्वम
स्यादिवाक्यजन्याखण्डानुभूतेस्तु यत्त्यर्थः तेन सर्व
व्यापकामखण्डितायं परमानंदरूपं च ब्रह्मेत्युक्तं न ८
नुसरणयोग्यमिति मा भूत् अणोरणीयानिति प्रकरणोपक्रमश्रुत
श्रुतेः अंगुष्ठमात्रपुरुषः अन्तरात्मा मात्रो ह्यवतावे
हृदि इत्यादि श्रुतिप्रतिपादितो जीवो भिन्नत्वान्न नो
न भिन्नताः सर्वव्यापिकत्वमेतस्य आगूंकय ब्रह्मैवेद
ममृतं पुरस्तात्पश्चाद्ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेणाध
श्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठं तदेतत्
ब्रह्मापूर्वमनपरमनंतरमबाह्यमित्याद्याः श्रुतयो

स्येद्वितीयमेव ब्रह्म पूर्णमिति पारयंतीति पूर्वोक्तमेवदृ
ढयन्नाह न चोर्ध्वं न चाधो न चांतर्न बाह्यं न मध्ये न ति
र्यक् न पूर्वापरादिक् वियद्व्यापकत्वादखंडैकरूप
खे स्तदेकोवशिष्टः शिवः केवलोहं ५ वियद्व्यापकत्वात्
५ वियद्वद्व्यापकत्वात् आकाशवत्सर्वगतश्च नित्य
इति श्रुतेः वियतो व्यापकत्वादिति वा ज्यायानाका
शात् महतो महीयानित्यादि श्रुतेः जीवस्य सकलदेह
व्यापि चैतन्योपलब्ध्या महत्वेप्युपाधेर्धर्माध्यासेना
णुत्वमात्मत्वाभिधानात् बुद्धेर्गुणेनात्मगुणेन चैव
माराग्रमात्रो ह्यवरोपि दृष्ट इति श्रुतेः अखंडस्वरू
पत्वादिपर्यायत्वाणुत्वव्यपदेशात् ब्रह्मैव सेतरोहं

तात्पर्यं पनं नु ब्रह्मणो जगदुपादानत्वादुपादानोपादेय
योरभेदादखिलजगदभिन्नत्वेन ब्रह्मणो दुःखरू
पत्वात् न तदभिन्नत्वेन जीवस्य परमपुरुषार्थप्राप्ति
रित्याशंक्याह ब्रह्मणः स्वप्रकाशपरमानंदस्वरूपत्वात्
निखिलजगत्भ्रमाधिष्ठानत्वेन कारणत्वव्यवहारेणात्
थ्यस्तेन च समसंबंधाभावात् न तत्त्वानपलिप्तोप्य
स्तीत्याह न श्वेतं न कृष्णं न रक्तं न पीतं न कुब्जं न पी
नं न ह्रस्वं न दीर्घं अरूपं तथा ज्योतिराकारकत्वात्
देकोवशिष्टः शिवः केवलोहं ६ न कुब्जमणुन पीनं
महदिति नाणु महत् ह्रस्वदीर्घमित्येते चतुर्विधपरिमाण
निषेधात् इयत्त्वप्रतिषेधः सूच्यते इति रूपं प्रमेयं

नप्रमेयमस्वरूपं तेन सर्वेषामेव ऽव्यागुराकर्माश्शेष
शेषानिां तत्र वाद्यभ्युपगतानां निषेधः तथा च श्रुतिः अ
स्थूलमनण्वह्रस्वमदीर्घमलोहितमित्याद्यः अग्राह्य
मस्यार्थमिरूपमव्ययं तथारसं नित्यमगंधवञ्च यदित्या
द्याश्च सर्वानर्थशून्यं परमात्मस्वरूपं प्रतिपादयं
ति श्रोतस्याप्यर्थस्य न्यायेन स्थापयति हेतुमाह ज्ञा
तराकारकत्वादिति स्वप्रकाशज्ञानरूपत्वेनाप्रमेय
त्वात् प्रमेयत्वे घटादिवज्जडत्वादसत्त्वा[illegible]पत्तेः एतदप्र
मेयं ध्रुवमिति श्रुतेश्चेत्यर्थः ६ ननु कस्य ब्रह्मभावउ
पदिश्यते ब्रह्मतत्वोऽब्रह्मतत्वो वा नाद्यः तस्य जडत्वात्
असत्त्वाच्च न प्रथमः उपदेशानर्थक्यात् ब्रह्मभाव

स्य स्वत एव सिद्धत्वात् जीवस्य स्वतोऽज्ञत्वाभावेऽपि अ
विद्याव्यवधानेन ज्ञानेन निवर्त्तत इति चेन्न अविद्याया
वस्तेरात्मन्यध्यस्तत्वे द्वैतापत्तेः अन्यतरासिद्धेः प्रसंगाच्च
तदुक्तं वार्त्तिके अव्यावृत्ताननुगतं वस्तु ब्रह्मेति भण्य
ते अस्माद्विपरीतोऽस्यात् क्षितीपि सतो वस्तुनीति अ
भिन्नत्वे चोपदेशानर्थक्यं स्यादित्युक्तं तत्र किं परमा
र्थतः फलाभावमात्रमेवापेक्षितं किं वा प्रतीतितोऽपि
तत्राद्ये स्मिन्निष्टापत्त्या परिहरति न शास्ता न शास्त्रं
न शिष्यो न शिक्षा न च त्वं न चाहं न चायं प्रपंचः॥
स्वरूपावबोधो विकल्पासहिष्णुस्तदेकोवशिष्टः
शिवः केवलोऽहं ७ शास्ता उपदेष्टा कर्त्ता शास्त्रमुप

देशाकरणं स्वीक्ष्य॰ उपदेशाकर्मनिष्ठा॰ उपदेशाके
योग्यं श्रोता अहं वक्ता अयं सर्वप्रमाणसन्निधा
पित: प्रपंचोऽस्ति इत्यादि अनर्थ: परमार्थतो नास्ती
त्यर्थ: द्वितीयं निराकरोति स्वरूपेति अयमर्थ:
यद्यपरवेद्यान्नैवक्षेत्रात्मानात्मावेत्यादि विकल्पेन
एकमपि फलं निरूपयितुं न शक्यते तथापि स्वरूपा
वबोधरूपं ज्ञानफलमनुभूयते न चैतत्कथमेतद्वि
विकल्पनीयं सर्वं द्वैतोपमर्दे न विकल्पास्पदहे
तुत्वात् न ह्यद्वैतेऽनुपपन्नं नाम तथा च श्रुतिः न निरो
धो न चोत्पत्तिर्न बद्धो न च साधकः न मुमुक्षुर्न वैमु
क्तः इत्येषा परमार्थता ब्रह्मवादिसमगत्त्वात् आसीत् तद्ध

तमानमेवावेदहं ब्रह्मास्मीति तस्मात्तत्सर्वमभवद्
इत्याद्यः पूर्वमपि ब्रह्मस्वरूपस्यैव सतो जीवस्य
ज्ञानाद्ब्रह्मभावं दर्शयन्ति सर्वं च द्वैतं वारयन्ति न ७
चात्मनः स्वप्नकाद्यञ्चैतन्यरूपत्वे सर्वशाखासमा
ने जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादिव्यवस्था कथं न च म्मो
तैव व्यवस्थेति वाच्यं तथा सति सर्वस्यैव स्वप्न
त्वापत्तेरिति चेन्न लोहितादित्रयाणामपि स्वप्न
संते त्वे प्राप्ते भासन्तमारवेद्यकारवेत्रूपसंभवात् रसि
हितलोहितादौ न च सत्त्वे रूपत्वाद्यवस्थोपपत्तेः
परमार्थतस्तु न काचिद्व्यवस्थेत्याह न जाग्रन्मे
स्वप्नको वा सुषुप्तिर्न रचेपर्वो न चान्तेतलसः प्राज्ञको

41 वा अविद्यात्मकत्वाच् त्रयाणांतुरीयस्त्वेकोवशी
प ष्टः स्त्रीचः केवलोहं ८ अत्रचलेंकमेणापोर्वापर्य 2
स्नेहेंद्व्यः तथाहे अस्मन्मतेपदार्थस्त्रिविधः इकू
इस्प अन्यवारेपछेकल्पेत्तानांपदार्थांना
मनैचोंतर्भावात् तत्रइकू पदार्थ आत्मापरमा
र्थिक एक सर्वज्ञ एकरूपोस्य औपाधिकभेदे
नत्रैविधइश्वरोजीवःसाक्षीचेति अत्रकारणी
भूता ज्ञानोपाधेरीश्वरः अंतःकरणगतसंस्का
रावरचीन्नाज्ञानोपहितोजीवः प्रपंचेतंचेतरथस्ता
ते अत्रविद्याप्रातिबिंबेश्वरपहेबिंबंचेतनासाक्षी
बिंबेश्वरपहे तुबिंबप्रतिबिंबसवांतगतमरव

स्वरूपवत् जीवेश्वरामतं सर्वानुसंधातृचैतन्यं सा
हीत्युच्यते वार्त्तिककारमते त्वीश्वर एव साक्षीति द्वै
विध्यमेव जीवेश्वरभेदेन त्रैविध्यं: तत्रेश्वरोपि त्रि
विधः सोपाधिभूतात् विद्यागुणत्रयभेदेन विष्णुब्र
ह्मरुद्रभेदात् कारणीभूतसत्वगुणावच्छिन्नो वि
ष्णुः पालयिता कारणीभूतरजउपहितो ब्रह्मा स्रष्टा
हिरण्यगर्भस्तु महाभूतकारणत्वाभावान्न ब्रह्मा त
थापि स्थूलभूतस्रष्टृत्वात् क्वचिद्ब्रह्मेत्युपचर्यते
कारणीभूततमउपहितो रुद्रः संहर्ता एवं चैकस्यै
व चतुर्भुज चतुर्मुख पंचमुखाद्यः पुंसाकारः स्त्री
भारतीभवान्याद्यास्त्र्याकाराः कूर्मोच मत्स्य
कूर्मादयोऽनेकावताराः लीलयैवाविर्भवंति भक्ता

तुगमलार्थमित्यवधेयं जीवोप्यत्रिविधः स्वोपाध्य
वांतरभेदेन विश्वतैजसप्राज्ञभेदात् अत्रात्रिविधा
तः करणास्थूलशरीरावच्छिन्नो जाग्रदवस्थाभि
मानी विश्वः स एव स्थूलशरीराभिमानरहितः
उपाधिद्वयोपहितः स्वप्नावस्थाभिमानी तैजसः
स एव शरीरांतःकरणोपाधिद्वयरहितोंतःकर
णसंस्कारावच्छिन्नोऽविद्यामात्रोपहितः सुषुप्त
वस्थाभिमानी प्राज्ञः एतेषां च वास्तवस्वतंत्रो
पाधिभेदाभावेन स्वतंत्रभेदाभावेप्यवांतरो
पाधिभेदादेकत्वेप्यवांतरभेदो व्यवह्रियते सा
हित्यसर्वानुसंधानात्सर्वानुगतस्वरूपापरत्वाए
करविध एव तत्रोपाधिभेदेनापि न काचिद्भेदः॥

तदुपाधेरेकरूपत्वात् अथ व्यष्टिरूपस्वरूपं अनेकरूपा
ते अविद्यातत्त्वाप्यतत्कार्यात्मकः प्रपंचो व्यष्टिरूप
सार्थः तस्य चापारमार्थिकत्वेऽपि व्यवहारादिकस
त्वाभ्युपगमात् स्वाप्नैकपदार्थवत् अनेकरूपं व्यष्टं तां
उपासनाशावुपपद्योगादेरित्ते सोऽप्येकविधः अ
व्याकृतमूर्त्तामूर्त्तभेदात् तत्रासाभासाविद्याम्
र्त्तामूर्त्तप्रपंच बीजश्रास्कैरूपात इजन्यत्वेऽपि त
स्यैव तौ निवर्त्तमानत्वेन तत्पापेपेतन्यात् संबंध
डीवे पश्चरवैभावे दाभासेः सहानादित्वाद्व्या
कृतमित्युच्यते सा च स्वयं जडाप्यजडेन चिदा
भासेनोज्ज्वलिता पूर्वसंस्कार जीवकर्मप्रयुक्ता
सती प्रत्येकस्य त्रिरूपरसगोधात्मकानाकारावा

पुनर्जोजलपृथिव्याख्यानि पंचमहाभूतानि जन
यन्ति तत्र पूर्वपूर्वभूतभावं आपन्नं यान्यखंडाया
उत्तरोत्तरकार्यं प्रतिकारणत्वात् पूर्वपूर्वभूतगुणा
नामुत्तरोत्तरभूतेष्वनुप्रवेशः एवमखंडात्तत्वं
घवाभेः रवैभावरूप एवा वैरांम्भा चाहुखझां नखे.
रोधी आलोकनाघ्रप प्रकटेति महादेवगुहार्थ
साधैर्भावितैरोभाववतीति सिद्धांतः संसारहे
तुरहोपादानत्वाभावाद्यनप्युतेषु स एव प्रक्के
यापामाम्नायतङ्क्ते अखंडाः रत्यकालौत्वप्र
मारतिकत्वान्नोक्तो आकाशस्यैव देशव्यवहार
जनकत्वसंभवात् रत्यताः पत्रोत्तरमेरतेष्युतेः का
लेश्वरखंडेव तस्याएव सर्वाधारत्वादिति मूय

चाव्याकृतपरार्थईश्वरोपाधेः तानिचसत्वात्प
पंचीकृतानिपंचमहाभूतानिअमूर्त्तरूपाणिका
रणानिचयात् सत्त्वरजस्तमोगुणात्मकानिसत्त्वांश
प्राधान्येनमानस्क्रियाज्ञानात्मकमेकंस्वच्छड
व्यंस्वेत्ररूपमेवमेलेत्वाजनयंति तस्यचज्ञान
शक्तिप्रधानोंशोंतःकरणंतच्चबुद्धिर्मनइतिद्वि
विधोच्यतेक्रियाशक्तिप्रधानोंशःप्राणःसचपं
चधाप्राणापानव्यानोदानसमानइतिएवमे
कैकभूतेभ्योज्ञानक्रियाशक्तिभेदात्प्रत्येकमि
न्द्रियद्वयंद्वयंजायतेआकाशात्श्रोत्रवाचौवायोः
त्वकपाणीतेजसश्चक्षुःपादौअद्भ्योरसनापायू द्यो
पृथिव्याघ्राणोपस्थौचेतिअत्रचतेजोम्भसीवा

रीतिप्रकृतेस्तैजसी वाक्‌ पारस्तु नाभसस्तेनैकस्यैव त॥
ग्राहकत्वं जकेंद्रियत्वे नतु प्रश्नोत्रवत् वाचोनभसत्वं पा
रस्येवके सपाचच्चक्षुषः स्वास्थ्या रश्मिनोच्चक्षुर्वत्यादि
स्पार्थि तैजसत्वरमिरतेतु युक्तमुत्पश्यामः तेजोमय
त्व प्रकृतेस्तु मनसः पंचभूतकार्यस्यापान्नमयत्व
प्रकृतेरिवत्त उपकार्यतयाव्यारव्यायामनस्य पंचभूत
गुणानामाहकत्वेन तद्धत्रश्नेपक्षयात् रसमन्यत् एतेषाम
धिष्ठातारो देवाः पेज्ञानकेयाब्रास्तिके प्रधानाः दिग
ग्निवातेजौश्वारस्तेनारवेश्मूवरुणस्मैत्रौश्वनेयप्र
जापतीरितितत्र ज्ञानशक्तिसमष्टेरन्तःकरणांशे
याशक्तिसमष्टेः प्राणाः ग्राहकस्पर्शरूपरसगंध
ग्राहकाणि श्रोत्रत्वक्चक्षुरसनघ्राणाख्या

सि पंचज्ञानेंद्रियाणि त्वक् चक्षुषी रसना घ्राणश्रोत्राणि
यं च आमयेम ह्लीतः श्रोत्रमस्यैच क्षुर्वत् गत्वा ग्रहण
हकं हरे घ्राणं स्पर्शं त्वक् प्रतीतेः वचनादानगत्तेरवे सर्गानंद
न जंकारने वाक्पाणिपाद पायूपस्थाख्यानि पंचक
मेंद्रियाणि एतच्च सर्वं रसमेलेत्वा स पुरुषस्य केलिं ग्रंथा
नवाप्तिके प्राधान्येन रहितं रागभंग्स्ते रक्षे यावत्कि
प्राधान्येन नसूत्रमेरत्ते चोच्यते अयममूर्तपदार्थः
कोयत्वात् व्यष्टौ समष्टौ च जीवोपाधेरवे तानेच तथा
भूतानि भोगायं तु सूक्ष्मरूपं भोगं पंचविषयमेत्तरेताभो त
गे जनयेत्तु मनुष्यं कुर्वीत जीवकर्मप्रयुक्तत्वात् स्थो कुं
लपायपंची कृतानि भवंत्ति तत्र स्थूलके पंचभूतानि चै
रिविधा विभज्यंते तत्रैको भागः चतुर्धा विभज्यते त

भागचतुष्टयं च स्वभागं विहायेतरभूतचतुष्टयार्धभागे
प्रवेशयतीति स्वस्यार्धभागेनेतरेषां अष्टमभागेन च
पंचीकरणान्मेलनेन व्याधैकर्येकाकाशादिशब्दप्रयोगः
अयं चैतन्मेवैकैकं करवाणीति श्रुतेः त्रिवृत्कुर्वदु
पदेशादिति सूत्राच्च त्रिवृत्करणमेव मेलनप्रतीतेरा
त्रिवृत्करणमेव केचिन्मन्यंते तेत्वेवं पंचीकरणस्या
प्येवं वनेराकृताः तथाहि तैत्तिरीयके तस्माद्वा एत
स्मादात्मन आकाशः संभूतः आकाशाद्वायुः इ
त्यादिश्रुतेः पंचानां गोत्रायणां सृष्टिप्रवणतो पंचीकृत्यो
पसंहारः तेजः प्राधान्यपदार्थे धमपि हृद्या आ
काशवायुपदार्थयोर्बलीयस्त्वात् च्छ शेष्ये चैक
विज्ञानेन सर्वविज्ञानप्रतिज्ञानादाकाशवायो

मेलनके पुनः कथन

रचेतनयोर्ब्रह्मकार्यत्वाविशेषपंवाचत्वात् तत्र पंचानां मे
लनेप्यवं यु त्यनुवादेनात्रे वृत्करं पपरस्ते: रखेव णो
ते मेवेतु तत्कल्पनायां वाक्यभेदप्रसंगः त्रिवृत्कु ती
र्वीत्युपदेशादिति सूत्रं च अनुवादत्वात्र पंचीकर
णं न्यायसिद्धं बाधितुमुत्सहते मेलनपूर्तीरित्तिप्र उत्साहकर्ता है
शरीरादौ पंचानामवस्थी एव पंचीकृतं महाभूता पंच
नीति च भाष्यकारवचनं तस्मादस्मन्मेना नात्म
स्थितेन त्रिवृत्कृतानि च पंचीकृतानि पंचमहाभू
तानि मूर्तीरख्यानि रमेलितैकं कार्यमिद्धयारामाम
रधिष्ठानं भोगायतनमुत्पादयंतीति तदेव ब्रह्मादिशरीरमित्यु
च्यते तत्र सत्वप्रधानं देवशरीरं रजःप्रधानं मनु
ष्यशरीरं तमप्रधानं तैर्यगादि स्थावरांतं शरी

पंचीकरणंहै

46

रथे

रं तस्य च शरीरस्य पांचभौतिकस्य पंचभौति
कस्य विचित्ररूपस्यैव कार्यस्य चिन्मूर्तानां केभावो भूता
नां नश्वरत्वे कथ्यते एवं शेषयोरपि पंचीकृतैकैकभू
ते जन्याः चतुर्दशभुवनाख्याः ऊर्ध्वमध्याधोभावेन
सत्वरजस्तमोगुणप्रधाना घटादयः एतत्सर्वं ब्रह्मा
ण्डाख्यं वैराडिति मूर्तिरिति चोच्यते अयमौप
निषदः सृष्टिक्रमः एतद्विपरीतो लयक्रमः पं
चीकृतपंचमहाभूततत्कार्यात्मकं वैराडाख्यं
मूर्तविश्वं व्याष्टैकैकभूतलयेनामूर्तेषु पंचीकृतपं
चमहाभूतात्मके हिरण्यगर्भाख्ये स्वकारणे लीय
ते स एव दैनंदिनप्रलयः अमूर्तं चाव्याकृते परमेश्व
रोपाधौ अव्याकृतं तस्य च नाशश्चेन्नैव कारणाभावा

प्रलयः स्वकारणे सूक्ष्मरूपेणावस्थानं लय इत्येतेन दृष्ट
त्वात् अयमेव प्राकृतलयः ब्रह्मज्ञानादुच्छेदस्त्वात्यं
न्तिकप्रलयः स च कारणात्क्रमेणैव कारणोच्छेदात्स्व
कार्योच्छेदात् सर्वं चिरस्थे प्रलयादिकं स्वप्नसदृशे
प्रलयवदपारमार्थिकमपि वासनाशादृष्टान्त् व्यवहा
रहेतुमरमेरिति न मार्थिकत्वे स्थितुच्छत्वप्रसंगः यथा चै
ते स्वप्नाव्यक्तमात्रे एवं स्थिते जाग्रदादिव्यवस्थोच्य
ते इन्द्रियवृत्तिकालीनोपाधिपलंभो जाग्रदेतत्तत्र च मूर्त्त
रविराडाख्यं भोगं प्रत्यक्षादि प्रमाणषट्केन व्याव
हितप्रमाणत्वात् व्यवहारैकं स्वैप्लवात्मना जीवेनोप
भुज्यते स च देहेन्द्रियादिषु प्रवेशात् व्यापनाद्वा वे

47

पद्द्रतुच्यते स्वेप्नप्रपंचज्ञाने ये पूर्वाभासौ चेतिस्मरत्वा
न् अत्र च यद्यपि स्वेप्नेनामूर्त्तमेव्या कृतं च नुमाना
दिनानुभूयते तथापि व्यावहारकं सर्वं विपर्येनेव
सायत इति च नियमात् तत्स्थूलशरीरोपाधिप्रमेमा
नत्वाच्च न तस्यावस्थांतरव्यापकत्वं शुक्तिरजतादि
ज्ञानानामप्रमात्तोकत्वात् तद्वेषयस्यापुव्यावहार
कत्वेपि इंद्रियवर्षापारकालीनत्वाजागरत्वापव
त्तिः ज्ञानोत्पत्यादि प्रक्रियाधस्तादुक्तैव एवं जागर
गजनककर्मक्षये स्वापभोगजनककर्मोदयश्च स
त्तेनैऽरव्यायां नामस्यावस्थां स्थूलदेहाभिमानेह
रीकृत्ते सर्वेंद्रियेषु देवतानुग्राहाभावात् स्ने व्यापा

रत्तयालीनेषुरवेषयोरथेलीनइत्तेउच्यते तदाविस्वप्ना
वस्था तत्रचांतःकरणागतवासनानिर्मित्तंइंद्रेय
व्यापारभावकालीनोर्थोपलंभःस्वप्नःतत्रमनएव
गजतुरंगाद्यर्थाकारेणपरिणमतेआरवेयायस्मा
चेत्ता यत्तेइत्तिकेचित् आरवेद्यैवस्पुरत्के रजता देव
स्वप्नाद्यर्थाकारेणपरिणमतेज्ञायतेचारवेद्यायस्य
रितिएकःपक्षःपरेयान् उत्तरः आरवेद्यायाएवसर्व
गोचर्याधिष्ठानत्वेनाध्यासोपादानत्वेनकल्पेयत्वात्
मनोगतवासनानिर्मितत्वेनचक्वचिन्मनःपरि
णामत्वव्यपदेशात् ननुतदामनसोऽर्थरूपाकार
परिणामानभ्युपगमेऽध्यासंभवेन आत्मनःस्व

४० मैनकेसे योग तेऽप्यात्मा के सर्वत्तिकांतःकरणावच्छिन्नकेप्रमा
48 ज्ञानगुणा वेमन विना प्रवृत्त हैनकेवलांतःकरणावच्छिन्नके
आत्मा सुख दुःखं ...
यज्ञोरत्ते सूक्षासिरह्मिरेखित्ति चेन्न बहिरेंद्रियवत्स्वभावे
नतराणां मनसो ग्राहकत्वात् तत्सहकारेणेवत इंद्रियवृत्ति २
स्यमनोग्राहकत्वानेयमात् सर्वत्तिकांतःकरणावच्छि
न्नस्यैव चैतन्यस्य प्रमातृत्वानेयमात् तत्रांतःकरण
सत्वेपि प्रमातृत्वाभावः रेकेमत्थेइणनं स्वप्नाध्यास
स्यमनोवच्छिन्नं जीवचैतन्यारमेवके मूलाज्ञानाव
च्छिन्नं ब्रह्मचैतन्यारमेवापरेके ब्रूयः मतभेदेनो
भयमप्युक्तवाधारेरे जाग्रद्बोधेन स्वप्नभ्रमनिवृत्त्य
नुपपत्तेमात् अधिष्ठानज्ञानादेव च भ्रमनिवृत्तेः
ब्रह्मचैतन्यस्य चाधिष्ठानत्वे संसारदशायां तज्ज्ञा
नाभावात् ज्ञानेवास वच्छिन्नतत्ववृत्तेःन जाग्रद्बोधा

स्व प्रमातृचैतन्यमेवाधिष्ठानं ...

व्यावहारिकस्यप्र
तिभासकस्यचसा
धारणत्वं

च
त्वचप्रतेनिवर्त्तेः स्यात् सत्त्वैककर्तृत्वेजीवकर्तृत्वच्युतेः आका
शादिप्रपंचवत्सर्वसाधारणतयापत्तेरवं न मूलाज्ञानावच्छि
न्नेब्रह्मचैतन्यमध्यासानं ननु जीवचैतन्यस्याज्ञानावृतत्त्वेन
सर्वदाभासमानत्वात्कथमध्यासनत्वं सत्यं तत्रापि स्व
प्राध्यासानुकूलव्यावहारिकसंघातभानस्वेरोध्यावस्था
ज्ञानाभ्युपगमात् ननु व्यावहारिकसंघातभानस्विरो
ध्यावस्थाज्ञानकल्पने कथं व्यावहारिकमनुष्यादि
संघातभानं तत्राह ज्ञाप्यार्थास्वरूपे मीलते ज्ञाप्यांतरभा
नेसामग्र्यभावप्रयुक्तत्वएव नन्वहं मनुष्य इत्यादिव्या
वहारिकसंघातज्ञानस्य प्रमाणजन्यत्वात् कथम
ज्ञानानिवर्त्तकता अवस्थांतराज्ञानानुपपत्त्यात्तत्के

स्पी

स्वप्ने सुषुप्त्यावस्थे स्वप्नबाधकज्ञानमास्थीयेत् तच्चा
लीकं जागरत्वापत्तेरिति चेत् नासौ स्वबोधः स्वप्नाव
स्थाज्ञानस्य एवांतःकरणलयसहितस्य सुषुप्ति
रूपत्वान्न तत्र सद्बाधः जागरतोनुरमेघ्येव स्वप्नोभा
रेत्यनुभवात् अहंस्मरत्तिज्ञानस्य प्रमाणाजन्यत्वे
पि यथार्थत्वात् शारीरादिज्ञानस्य च प्रमाणजन्य
त्वात् स्वप्नाज्ञानस्य विरोधित्वमनुभवसिद्धं स्वबोधा
ज्ञानं तु न प्रमाणजन्यवृत्तिमंतरेणाभिवर्त्तते साक्षि
ण्यध्यारवेघ्यारनिवर्त्तकत्वाभावो स्वेद्यासाधकत्वेन
वेधर्मिग्राहकमानरसिद्धइति नरकैश्वेरवद्यं याचं
तिज्ञानानिवत्तावंत्यज्ञाना रनिवृत्तेश्चाभ्युपगमात्

मुक्तिज्ञानेनैव व्यवहारिकसंघातज्ञानेनाज्ञानरत्ने
वेत्तं त्त्रुटिपुनररपेकरार्चेऽजत्तभ्रमवत् न स्वप्नाध्या
सानुपपत्तेरिति जीवचैतन्यमेवाधिष्ठानमिति पर्हे
नकोपि दोषः यदापुनर्ब्रह्मज्ञानादेवाज्ञाननिवृत्त्य
भ्युपगमस्तदारज्ज्वांरंडभ्रमेणासर्पभ्रमनिरोधान
वत् अधिष्ठानज्ञानाभावेपिजागृत्क्रमेणा स्वप्नभ्रम
निरोधावोपपत्तेः ब्रह्मचैतन्यमेवस्वप्नाध्यासोपादा
नमिति पर्हेपि न कश्चिद्दोषः प्रतिजीवं स्वप्नाध्या
सासाधारणापत्तु मनोगतवासनानामसाधारणापारे धी
वे मनोवच्छिन्नं ब्रह्मचैतन्यमेवाधिष्ठानं एतस्मिन्न
पिपर्हे स्वप्नाध्यासानस्यावरकत्वांगीकारान्नकोपप

नुपपत्तेः अत एव ज्ञानस्य पुरुषत्वेन कश्चित्तथा व्यपदे
शः ननु मनोवृत्तेश्चैतन्यस्याधिष्ठानत्वे हं गज
इत्यहंकारसामानाधिकरण्येनैव प्रतीतिः स्यात्
इदं रजतमितिवत्प्रतीतिसमानाधिकरण्येन रजतप्र
तीतिवत् न त्वयं गज इति भ्रमः चैतन्यस्याधिष्ठानत्वप
क्षेपि गज इत्याकारैव प्रतीतिः स्यात् न त्वयं गज इति
तेत्रापीदंकारास्पदीभूत बाह्यार्थाभावस्यासमा
नत्वादिति चेन्न आद्यपक्षे हं कारस्य प्रवृत्तिवदधि
ष्ठानावच्छेदकत्वात् शुक्तिरजतमितिवदहं गज इति
नेभ्रमाकारप्रसंगः अहमिति ज्ञानस्यैव प्रवृत्तिरि
ति ज्ञानस्यैव भ्रमावच्छेदकत्वात् इदं मन्त्रास्यच भ्रमा

जोऽनंतरं श्रूयं यो वा स्वप्ने
इदम श्रो स्व रजतं विभात

कारारवेरोरधीन एवतैत्रभानोभ्युपगमात् स्वप्नेतुग
जेऽइत्याकारवदयरमित्याकारोरपिकत्वेत एव उभया
कारबाधेपि आधिष्ठानभूत चैतन्यस्याबाधान्नप्र
न्यावारप्रसंगः जागद्दशायामपिशुक्तीदंकाररवे
लोहरतास्य प्रतीतेकस्यैवरजतेदंकारस्याभानाभ्यु
पगमाद्य अधिष्ठानमेवरहेपरस्फुरति अमेषुइत्ते
न्यायात् शुक्तीदंत्वाभानपहेरपिनेदमंशस्यसत्य मे
त्वमध्यसि प्रवोजकं रकेत्वरधिष्ठानसत्यत्वं अधि
ष्ठानं च तत्रामात्तं शुक्तिचैतन्यमेव अत्रापि साहि
चैतन्यं रवेघत्ते एवेत्युपपादितं तस्मान्नपक्षद्वयस्यापि
कोप्यनुपपत्तिः अत्रचस्वाप्नेकपदार्थभोक्तातैजस
इत्युच्यते रपेतारव्यातेजः प्रधानत्वात् आदित्यादि

जोस्तिरंतरेरागाद्यपि भासकत्वाद्दीतिवा एवं जाग्रत्स्व
प्नभोगाद्वयेन प्रांतस्य जीवस्य तदुभयकारणक
र्मक्षये ऽज्ञानवृत्त्यवच्छिन्नस्य सवासनास्यांतः
करणस्य कारणात्मना वस्थाने सत्येव प्राग
स्थाने सुषुप्त्यवस्थाकारणमात्रोपलंभः सुषु
प्तिः तत्र जाग्रत्स्वप्नभोग्यपदार्थज्ञानाभावेपि सा
क्षात्कारं सुखाकारमवस्थाज्ञानाकारं च वृत्ति
त्रयमभ्युपेयते अहंकाराभावविशिष्टैकवृ
त्त्यवस्थै सुषुप्त्यभावप्रसंगात् वृत्तिरूपस्योपलंभ
स्याभावान्न प्रलयातिव्याप्तिः तत्र तत्कल्पनाबी
जाभावात् इह च सुखमहमस्वाप्सं न किंचिदवे
दिषमिति सुप्तोत्थितस्य परामर्शात् अननुभवे परा

त

तिसमानभवकेस्मरणसमयेऽभावसंते
स्मर्त्रनुपपत्तेश्च अतः करणोपरागकालीनानुभव
जन्यत्वाभावाच्च न तन्नोलूखलाभावेऽपि स्मरणत्वानु
पपत्तेः स्मरणोत्तरकालेऽस्वानेयमाभावेऽपि जानातद्द
शायामस्वाप्समिति अनुभवानुपपत्तेः स्वेगाभावे
नचाप्रयासेह्माचानुमानस्यासंभवात् अहंका
रस्तु ध्यानसमय एवानुभूयते सुषुप्तौ लीनत्वेन तस्य
नानुभूतत्वात् स्मरणानुपपत्तेः सुखप्रतीतेर्बाधश्च
यथोपरागे जपाकुसुमलौहित्याध्यासे रक्तं स्फटिकमे
ति प्रतीति वदहंकारोपरागयत्वासाक्षिचैतन्यस्य
स्मरणाश्रयत्वाहमस्वाप्समिति सामानाधि
करण्यप्रतीतेः पुनरहं सुखीत्येवरोपरागयत्तया

साक्षी के स्मरण की आश्रयता। अहं सुखी
ति नहीं सुख का परंपरा के आश्रय है
सुख का आश्रय अहं है और अहं का साक्षी।

52 स्मृतेसंशयरूपविपर्ययात्तांसाक्षिचैतन्याप्यप्रयत्व
स्येयमात् अहंकारस्यच प्रमाणाजन्यज्ञानाप्रव
त्वात् प्रमात्वेनैवतत्कार्यत्वावच्छेदात् अप्रमात्वा
वच्छेदेनचविधायाएवकारणत्वात् अतएवानापू
र्वीकारादिजन्यपरोक्षत्वेभ्रमोपपत्वेघावस्त्वेरवेसु
पगमोवेदांतरवेदांतवांतःकरणावृत्तेजनकसा
रमिन्नीसंभवेऽपिप्रमात्वाभावापराधेनअंतःकर
णस्यासामर्थ्यात् नामादिषुब्रह्माध्यासस्तुइच्छा
धीनतयाभ्रमप्रमारवेलक्षणमनोवृत्तेरेवकामा
दिवत् तदुक्तं अतएवचोदनाजन्यत्वान्मनसी
रक्षैयैचसानज्ञानरमिरते एतेनतर्कस्यापिमनोव

त्तीत्वं व्याख्यातं व्याप्यारोपेण व्यापकप्रसंजनात्म
कस्य तर्कस्य सिद्धाधीनतया भ्रमप्रमाबहिर्भूतत्वात्
अतएव मनननिर्दिध्यासनं स्वरूपतः प्रमाणत्वाभावे
हीतवाक्यविचारप्रयोजनत्वं मननत्वोर्निदिध्यास
नवोऽस्त्यादिविरोधो रूपपद्यते तस्य चतुर्विधान्वय
व्यतिरेकः तर्करूपत्वात् दृग्दृश्यान्वयव्यतिरेकः
साक्षिसाक्ष्यान्वयव्यतिरेकः आगमापायित्वद्व
यान्वयव्यतिरेकः दुःखपरमप्रेमास्पदान्वयव्य
तिरेकः दृश्यानुवृत्त्यावृत्त्यान्वयव्यतिरेकोऽपि पंचमः
एतत्सर्वं वेदांतानुकूलतर्काणां चैतुलहिरामी
मांसाप्रतिपादितानां उपलक्षणमेतदभियुक्ताः

८५

53 खिस्तारस्तु वेदांतकल्पलतिकायामनुसंधेयः तदेवं
सुषुप्त्यवस्थायामस्त्यानंदभोगः तज्ज्ञाता च सुषुप्त्य
भिमानी प्राज्ञ इत्युच्यते एवकेवलिरापि गीत्वात् तदानीं
रविद्योपाधेर्हैदाभावेन प्रकृष्टज्ञत्वाद्यात्तदानीमंतः
करणस्य लयेपि तत्संस्कारेण वर्धेदात्रजीवाभा
वप्रसंगो न वासर्वज्ञत्वापत्तिः ईश्वराभेदप्राप्तेपाद
नेच शरीरेंद्रियाद्यभिमानरहितत्वेनोपचारा
त्संस्कारस्य च पुनेर्मित्तिकारणत्वेन साक्षात्स्थि
तकार्योपादानकोटावप्रवेशात् न तज्ञेदरूपीसा
क्षिभेदः जाग्रतोत्वंतः करणस्य प्रमाणाप्रत
कार्योपादानकोटौ प्रवेशात् नेदेन प्रमात्रभेद एव

बोधयाय न
यप्रतिभासे ने श्लो०

साक्षिता एव बाधकोपाधिर्वैरूप्यो एस्य प्रमातृत्वं
प्रतिसंधानानुपपत्तेरिति मातृमानप्रमेयेष्वपि प्रति
देहं न भेद्यते साक्षी बाह्याप्यविषयस्मात्स आत्मेत्युच्य
तेतत: वारभेचारो रभेद्यो यद्वत्प्रमात्रादे: स्वसाक्षि
क: सर्वमात्राद्यभावावधिसाक्षित्वेन तस्यात्मनन्द २
स्तिवार्त्तिककारपादै: व्यवहारदशायामपि साक्षि
भेदस्यैवाकरणात् सुषुप्तौ तद्भेदकल्पनं केषां
चित् व्यामोहमात्रमित्यवधेयं ननु दु:खमहमस्वा
प्समिति कस्यचित् कदाचित् परामर्शात् सुषुप्तौ दु:
खानुभवोप्यस्तु नैतद्दानीं दु:खसाक्षित्वे रहिता म
६ त्वाभावात् दु:खस्य चात्मस्वरूपत्वेन नित्यत्वात्
दृष्टव्यादेदसमीचीनत्वे दु:खमित्युपचारात् दु:

९६

54.

खमहमस्वाप्समित्तिप्रत्ययोपपत्तेः अथवा
अवस्थात्रयस्यापि त्रैविध्यंभाकारात् सुषुप्ता
वपिडुः एवमुपपद्यते तथाहि प्रमाणाभे जाग्र
जाग्रत्प्रयुक्ति रजतादि भ्रमो जाग्रत्स्वप्नः प्रमा
रहि नास्ताथीभावो जाग्रत्सुषुप्तिः एवं स्वप्ने मंत्रा
दिप्राप्तिः स्वप्नजाग्रत् स्वप्नेपि स्वप्नो मया दृष्ट
इति बुद्धिः स्वप्नस्वप्नः जाग्रद्दशायां कथयेत्तु न बु
ध्यते स्वप्नावस्थायां च परस्कैश्चिदनुभूयते त
त्स्वप्नसुषुप्तिः एवं सुषुप्त्यवस्थायामपि सा
त्त्विकोपास्यसुखाकारावृत्तिः सा सुषुप्तिजाग्रत्
तदनंतरं सुखमहमस्वाप्समिति परामर्शः ९

तत्रैव यथा राजसीयस्तो: साक्षुषुप्तेस्वप्न: तदनंतरं उ:
खमहमस्वाप्सम्मेरिति परामर्शप्रतिपत्तिस्तत्रैव नाम २
सीवृत्ते: साक्षुषुप्तेसुषुप्ते: तदनंतरं गाढं मूढोऽहमा
सम्मेति परामर्श: यथा चैतत्तथा वासिष्ठवार्त्तिका
भ्रतो रौस्यापृ एवमध्यात्मं विश्व: अधिभूतं रवैट् रा
अधिदैवं विष्णु: अध्यात्मं जाग्रत् अधिदैवं पाल
नं अधिभूतं सत्वगुण: एवमध्यात्मं तैजस: अधि भू
भूतं हिरण्यगर्भ: अधिदैवं ब्रह्मा अध्यात्मं स्वप्न:
अधिदैवं सृष्टि: अधिभूतं रजोगुण: एवमध्या
त्मं प्राज्ञ: अधिभूतं अव्याकृतं अधिदैवं रुद्र: अ
ध्यात्मं सुषुप्ति: अधिदैवं प्रलय: अधिभूतं तमो

४८

55

गुरुणः एवमध्यात्माधिभूताधिदैवानामेकात्वात्
पूर्वावावयवत्रयसहितानामुपहितानामेतेषा
मैक्योपासनया हिरण्यगर्भलोकप्राप्तेः अतः
केवराग्रह द्वाराकममुरूपः एतत्सर्वोपिरहीसे
राकरत्तोन साहं चैतन्यमात्रेसानेनतुसाहा
दैवमोहसैतो तदैवत्रयाणामप्यवस्थात्रयस
हितानांधिपस्तैजसप्राज्ञानामखंडात्मकत्वात्
दनूपत्वेनरमेष्यात्वात् अनुपहितः केवलः सा
ही तुरीयाख्योहमस्मीत्यर्थः एवं व्यावृत्ताः स
र्वविधावस्थोपपत्तेः परमार्थतः कस्याश्चदप्यवा
वस्थायाअभावान्नकाप्यनुपपत्तिः ख्वेस्तरेतो

वैतत्प्रपंचितमस्माभिः वेदांतकल्पलतिकायामि
त्युपरम्यते २ ननु जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिसाक्षितानां
त्रयाणामप्येतेषामभिमानेनाभिमेयत्वात् तत्साक्षि
तारूपेऽभिधेयत्वं स्यात् अस्थैर्यादिरूपाकारवै
लक्षण्याभिधानेन साक्षितः सत्यत्वमाह अपेक्षा
पकत्वाद्धेतुत्वप्रयोगात्स्वतः सिद्धभावादनन्याप्य
यत्वात् जगत्सुषुप्ते तत्समस्तानंतरं सदेकोवशि
ष्टः स जीवः केवलोहं २ न दृष्टेर्द्रष्टारं पश्येरिति सा
क्षितां प्रकृत्य अतोन्यदार्तमिति श्रुतेः साक्षितो
न्यः साक्ष्यं सर्वजगत्सुखं न तु साक्षी बाधावधित्वात्
भ्रमाभिमानेप्यनन्तया ज्ञातत्वाच्च न तद्बाधगन्धकाभावा

स्वतन्त्रबाधकाभावाच्चेत्याद्यनुक्तसमुच्चयार्थोऽस्वि
न्नाष्टः अप्यय इत्यं तन्मतं प्रसिद्धेत्युक्तेः परमेश्वरे नित्य
इच्छात्वयोस्समव्याप्तत्वात् परमेश्वरे नित्यत्वे नैव स्यादु
च्छत्वे नैव स्तौरित्याह व्यापकत्वादिति सर्वं स्वरूले
देशस्तेति सर्वासिन्नोपरेशूनं देशाकालापरमेश्वरत्र
त्वात् आकाशादीनां च देशकालपरमेश्वरत्वे
व्यापेरुकमहत्त्वेन व्यापकत्वोपचारात् ननु स
र्वव्यापकत्वेन नित्यत्वाज्ञानस्वरूपत्वाच्चात्मानो नङः
स्वस्यैव वस्तिरूपो नास्ति सुखरूपे स्यान्नित्यत्वेन स्वे
त्यानन्दस्वरूपत्वानुपपत्तेः तथा चात्मस्वरूपो मो
क्षः पुरुषार्थ एवेत्याशंकयन्नेत्याह रहितत्वप्रयो

सुखरे

गादिरिति रहितत्वं पुरुषार्थत्वं नहि तत्प्रेयः पुत्रात् प्रेयो वि
त्तात् प्रेयोन्यस्मात् सर्वस्मादंतरं यदयमात्मेति यो वै
भूमा तत्सुखं एष एव परमानंदः दुःखे ज्ञानमानंदं ब्र
ह्मेत्यादिश्रुतिभ्यः तस्य परमानंदरूपत्वोपदेशा
त् तस्य च रत्नेत्यत्वेरवे लोके धर्मजन्यत्वेनांतःकरण
वृत्तिव्यंगतया तदुत्पत्तिरवेनाप्युपचारात् अज्ञान
व्यवहितस्य च तस्याप्राप्तस्येव ज्ञानमात्रादस्वैद्या
रनेवृत्याप्राप्तिरिव भवतीति तदुद्देश्येन मुमुक्षुप्रवृ
त्त्युपपत्तेः अध्यस्तस्य प्रपंचस्य दुःखरूपस्याधि
ष्ठानत्वात् स एवाभाव इति दुःखाभावरूपत्वेनापि
तस्य पुरुषार्थता ननु मोक्षे सुखं संवेद्यते न वा ना
द्यः तदानीं देहेंद्रियाद्यभावेन तद्व्यंजकाभावात् वं

जकाभावेप्येतत्संवेदनाद्यभ्युपगमे संसारदशा
यामप्येतस्याप्रसंगात् नरद्वितीयः अपुरुषार्थ
त्वापत्तेः सोयमानस्यैवतस्यपरमपुरुषार्थत्वा
त् अतएवप्राकरात्तमोजेनार्थवेरत्ते वैषम्यवंम
न्यानाष्ठभाद इतीचेन्नेत्याह स्वतः इति सिद्धभावादि
ति स्वप्रकाशज्ञानरूपत्वादित्यर्थः यद्यपि संसा
रदशायामप्येषापचितस्वरूपत्वादात्मापरमानं
दरूपतयानप्रतीयते तथापि तत्त्वरवेदयया अन्ये
षति वृत्तौ स्वप्रकाशतया स्वयमेवपरमानंदरू
रव पेणाप्रकाशत इति नबीजकापेक्षा ननु स्वं स्व
स्वप्रकाशज्ञानरूपत्वेप्येनात्मरूपताज्ञानस्य

धात्वर्थरूपतयाऽज्ञेयत्वेन साश्रयत्वात् जाना
मीतिप्रतीतेर्ज्ञानमहमस्मीत्यप्रतीतेश्च तथाच
कथमद्वैतवाद इत्याशंक्य नेत्याह अनन्या
श्रयत्वादिति यत्साक्षादपरोक्षाद्ब्रह्म य आत्मा
सर्वांतरः सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म विज्ञानमानंदं ब्र
ह्मेति श्रुतेः स्वप्रकाशज्ञानानंदरूप एवात्मा
अंतःकरणतादात्म्याध्यासेन च तद्वृत्तौ ज्ञाना
ध्यासात् जानामीति तदाश्रयत्वप्रतीतिर्धीत्व
धर्मत्वमुत्पत्तिरविनाशत्वं चांतःकरणवृत्तेरेवेति
ज्ञेयं स्वरूपसुखज्ञानस्य सर्वाधिष्ठानत्वेनान्याश्र
यत्वाभावात् नाद्वैतापत्तिः तेन ज्ञानसुखात्मकः आ
त्मा सत्यः तद्भिन्नं च सर्वं जगदसत्यमितिसिद्धं ९

५०

ननु सर्वस्य जगतस्तुच्छत्वेन तन्निषेधो नात्मनस्तत्त्व
प्रतिपत्तेर्न स्यात् न हि भ्रान्त्यारोपिताकारं निषिध्य
ते धिकश्चित्परमेतत् कश्चिन्निषिध्यत इति न्यायात् ॥
58 तथा च निषेधानुपपत्त्यैव न जगत्तुच्छत्वं परमेतत्तेने
९० त्याह न चैकं तदन्यद्द्वितीयं कुतः स्यात् न वाके
वलत्वं न चाकेवलत्वं न शून्यं न चाशून्यमद्वै
तकत्वात् कथं सर्ववेदान्तसिद्धं ब्रवीमि १० एक
त्वसंख्यायोगी एकं तदपेक्षाबुद्धिजन्यद्वित्वसं
ख्यायोगी द्वितीयं तत्र एकाभावे द्वितीयं कुतः स्या
त् द्वितीयं च तृतीयादीनामप्युपलक्षणम् ननु ए
कमेवाद्वितीयमिति श्रुत्या एकत्वं प्रतिपाद्यते
नेत्याह न वा केवलत्वं एकत्वं तस्य द्वैघकत्वात्

यद्यात्मन एकत्वं श्रुत्यानुप्रतिपाद्यते तर्हि प्रत्यक्षा
दिप्रमाणविरोधान्नैकत्वमेवस्यादिति चेन्नेत्या
ह नेत्याकेवलत्वमिति अकेवलत्वमनेकत्वं ने
ह नानास्ति किंचन एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म अथात
आदेशो नेति नेति इत्यादिश्रुतिभ्यः तर्हि सर्वप्र
तिषेधाच्छून्यमेवस्यादिति नेत्याह नपूर्नारभे
ति अ सोदेव सम्भवति असद्भूतेति चेद्द्रष्टरि तिन अ
सतीति चेद्द्रष्टरि संतमेनं ततो विदुरिति सत्यं ज्ञानम इति विद्य
नंतं सदेव सौम्येदमग्र आसीत् इत्युपक्रम्य ए मानत्वं
तदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसीत्या
दिश्रुतिभिः सत्त्वं च प्रतिपादनात् सर्वक्रमाद्ध

त्व

५९

59

च

ष्टानत्वात् सर्वबाधावधित्वात् नरहेसत्यत्वसा
नत्वादेर्धर्मवत्त्वेपिस्यान्नेत्याह नचाप्यनात्मेति
एकमद्वितीयंइतिपदद्वयेनसर्वप्रतिषेधेऽपिए
वकारेणधर्मधर्मिभावादिभेदाभेदप्रतिषे
धात् सर्वत्रहेतुमाह अद्वैतात्मकत्वादितिद्वेधाद
तंद्वीतंतस्यभावोद्वैतंतदुक्तंवार्त्तिके द्वेधेतंद्वैत
रमित्याहुस्तद्भावोद्वैतमुच्यतेइतिनावेद्यतेद्वैतंद्वे
धाभावोयत्रतदद्वैतमित्याहुराचार्याःसदनेत्याए
कोऽद्वेष्टा द्वैतइतिश्रुतेःप्रतियोगिनोज्ञानस्यैववा
धकेनाभावबुद्धौकारणत्वात् द्वैतस्यापनेर्वच
नीयत्वांगीकारेतोवप्रत्यक्षादिवेद्यत्वात्रेव

धोपपत्तेरित्यर्थः तर्हि एतावत्वा आत्मानुलेनैर्दे
त्रोन प्रत्त्येयत्वतारमेत्तेनेत्याह कथंब्रवरमेरकेमाह
पे अद्वैलकत्वेन वाग्विषयत्वात् अवचनेनैव प्रो
वाच यतो वाचो निवर्तंते अप्राप्य मनसा सह नवि
स्रोतेरवैज्ञातारं वेजानीयात् इत्यादिश्रुतेः प्रपं वा
गविषयत्वे वेदांतानां कथं तत्रप्रमाणपरमेत्तेचे
त् अविषयेप्यात्मनि तदाकारवृत्तिमात्रेणातद
वेद्यानिवर्तकत्वादित्याह सर्ववेदांतसिद्धमेतत्
तथा च श्रुतिः यस्यामतं तस्य मतं मतं यस्य न वेद
सः अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानतां यन्मन
सा न मनुते येनाहुर्मनो मतं तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं

परदिद्मुपासते इत्याद्येरवैषयत्वमात्मनोदर्शं
यस्ते नहेवंवेदांतवाक्यजन्याऽखंडाकारवृत्त्याविं
धारनैवचौतत्कारलीतसकलानर्थनिवृत्तौपरमा
नंदस्वरूपःसन्कृतकृत्योभवतीतितेसेवंनस्तोरमे
तं व्यासमवृत्तमर्थंसमाड-नसूत्रैरपपेयोबबं
धरवैनाय्येतैसंगत्स्येनारवेलाघंतिघुकरंनौमे
स्तुरेप्सरंचं लघुरत्पेबऊक [illegible] पविऊ [illegible] तामर
रतोश्वरनैबंधैर्यमं [illegible] रनेनमुत्येनारवेरहितोए
रतीनांरवेनाशाय यत्नेसौष्ठवंरकैरवे मधुरारव
मेनरहे यत्नाऽसौष्ठवंरकैरवैनमेवमधुरानरहेऊ
बऊयाचनयामया यमलोबलभऊस्यकृतेक

लोरस्तिबंधः यद्दुःखसेहास्तियन्नदुःखंतदुदाराः स्मुर
रधियोरवेवेचयंतु ॥ इतिश्रीमत्परमहंसपरिव्रा
जकाचार्यश्रीविश्वेश्वरसरस्वतीभगवत्पाद
शिष्यमधुसूदनसरस्वतीविरचितः सिद्धांतबिं
दुनाम ग्रंथः ॥ लिखितंदाससमूलेश्वतोजेन १८८१
मंघर १ शुभंभवतु कल्याणमस्तु श्रीराम १

५३ असाधारणधर्मप्रतिपादकं वाक्यं लक्षणं वाक्यं न प्रतिपाद्यमव
शिष्टं वस्तु लक्ष्यं
61 श्रीसच्चिदानन्दायनमः ननु एकं महावाक्येन लक्ष्यते सविकल्पक
मुत निर्विकल्पकमिति विकल्प्य । प्रथमे पक्षे दोषमाह पूर्ववा
मू० दी सविकल्पस्य लक्ष्यत्वे लक्ष्यस्यास्याद्वस्तुता सविकल्प
स्य विकल्पेन विपरीतत्वेन कल्पितेन नामजात्यादिरूपे
ण सह वर्तते इति सविकल्पं तस्य लक्ष्यत्वे वाक्येन बोध्य
त्वे लक्ष्यस्य वाक्यार्थतया लक्ष्यस्यावस्तुता स्यात् मिथ्या
त्वं स्यात् द्वितीये दोषमाह निर्विकल्पस्य लक्ष्यत्वं न दृ
ष्टं न च संभवेदिति १ व्याख्या निर्विकल्पस्य नामजा
त्यादिरहितस्य लक्ष्यत्वं न दृष्टं लोकेन क्वापि दृष्टं न च सं
भवेत् उपपद्यमानमपि न भवति लक्ष्यत्वधर्मवत्त्वे नि
र्विकल्पकत्वव्याघातादिति यावत् प्रसिद्धो जात्युत्त
रत्वान्नेदं चोद्यमिति विकल्पपूर्वकं दोषमाह विकल्प्य ।

असदुत्तर

मू० २

व्यावर्त्तकं विशेषणं १ व्यावर्त्यं विशेष्यं॥ हं

स अहर सहित पद को नेरूपक है सो सर्व हैं तन प्रथम पद है यथा
प्रथमांत तृतीयांत हैं सो का संबंध है

रनैर्विकल्पस्य सविकल्पस्य वा भवेत् आद्ये व्याहतिर
न्यत्रानवस्थात्माश्रयादयः २ व्याख्या सविकल्प
स्य वा निर्विकल्पस्य वा लक्ष्यत्वमेतयोर्विकल्पस्त्वया
कृतः सर्वकं निर्विकल्पस्य उत सविकल्पस्य भवेत्
आद्ये प्रथमे पक्षे व्याहतिः स्ववचोक्तो व्याघातः एव अन्य
त्र द्वितीये पक्षे अनवस्थादयः तथा हि सविकल्पस्य
विकल्पत्वात् विकल्पेन सह वर्तत इत्यत्र तृतीयांत विक
ल्पपदेन प्रथमांत विकल्पपदेन चैक एव विकल्पो
ऽभिधीयते द्वौ वा एक एव चेत् स्वयमेक एव विकल्पाश्रय
विशेषणत्वात्तथात्माश्रयस्तदाप्येतौ विकल्पपदेनात्माश्र
यता द्वौ चेत्तदा तृतीयांत शब्दने दिष्ट स्यापि विकल्प
स्य विकल्परूपत्वात्तदाश्रयस्यापि सविकल्पत्वात्
विशेषणताभूतो विकल्पः एकं प्रथमांत शब्दने दिष्ट

× प्रथमांतनृतीयांतका आश्रय अर सो तृतीयांत सविकल्पगत प्रथमांतका
आश्रय अर सो प्रथमांतने ~~प्रथमांत~~ नैर प्रथमांतका आश्रय

.५४ एवंविकल्पउक्तताभ्यामन्यः आद्येअन्योन्याश्रय
62 ता द्वितीयेपिधर्म्मिविशेषणीभूतोरवीकल्पःएकैकप्र
मोतनुएइदर्शनेद्वैति उक्ततेभ्योन्यः आद्येचात्रैकापत्तेः
द्वितीयेतस्याप्यन्यस्तस्याप्यन्यइत्यनवस्थापात्त
इतिर

गोड्डुयां दा दर्द जो अंदर्यां रै

कुंडो जाने को गोंद दा कछ्टां कदी

वांटी-चाय (चाह) नाल कालेरी है के

बराबर रवावे।

५६
64

ईश्वरानुग्रहादेवपुंसामद्वैतवासना महाभयपरित्राणाद्विप्राणामेव जायते
उं॥ श्रीगगनोपमरूपगुरवेनमः श्रीदत्तात्रयस्वात्मप्रतीत्युच्य
ते येनेदंपूरितंसर्वं आत्मनैवात्मनात्मनि निराकारंकथंवंदे
ह्यात्मानंशिवमव्ययं १ पंचभूतात्मकंसर्वंमरीचिजलसंनि
भं कस्यास्तीहनमस्कारो अहमेकोनिरंतरं २ वेदांतसारं
सर्वेषांज्ञानंविज्ञानमेवच अहंह्यात्मानिराकारं सर्वभेद
स्वभावतः ३ आत्मैवकेवलंसर्वंभेदाभेदोनविद्यते अस्ति
नास्तिकथंब्रूयाद्विस्मयःप्रतिभातिमे ४ योवैसर्वात्मको
देवोनिष्कंपोगगनोपमः स्वभावनिर्मलःशुद्धःसएवाहंन
संशयः ५ अहमेवाव्ययोनंत शुद्धविज्ञानमेवच सुखंदु
ःखंनजानामिकथंकस्यापिवर्तते ६ नमानसंकर्मशुभा
शुभंमेनवाचकंकर्मशुभाशुभंमे नकायकंकर्मशुभा
शुभंमे ज्ञानामृतंशुद्धमतींद्रियोहं ७ मनोवैगगनाकारं

१
५२
65
मन्त्रो वै सर्वतोमुखं सत्यो वै परमात्मैव न मनः परमार्थतः ८
लीयंते वा न लीयंते कथं कस्यापि वर्त्तते न रहे सन्नमसन्नं च ॥
आत्मैव केवलं यत्तः एक अहमेक मेवेदं सर्वं व्योमाकारं निरं
तरं पश्यामि कथमात्मानं प्रत्यहं चालेरो रहित्ते १० त्वमेव
मो हो हि कथं बुध्यसे सं बुद्धि सर्वे ष्व खेन एम व्ययः सदोदि
तो सि त्वमखंडतः प्रभो रे देवान कं च कथं हि मन्यसे ११
आत्मानं सततं खेहि सर्वमि को निरंतरं अहं ध्याता परं
ध्येय मखंडं खंडसे कथं १२ न जातो सि मतो सि त्वं न तेदे
हः कदाचिन: सर्वं ब्रह्म न ते व्याख्यातं श्रुवी रस्मि बहुधा श्रुती
: १३ स बाह्याभ्यंतरे वासि शिवः सर्वत्र सर्वदा इतस्ततः
कथं भ्रांतः प्रधावसि पिशाचवत् १४ संयोगाश्च वियो
गाश्च वर्त्तते न न ते मयि न त्वं नाहं जगन्नेत्ते सर्वमात्मैव

केवलं १५ आसारे पंचकस्यास्य नैवासि त्वं न ते पुनः त्वमेव प
रमं तत्त्वं मनः किं परितप्यसे १६ जन्ममृत्युर्न ते चित्तं बंधमोक्षौ
शुभाशुभं कथं रोदिसि रे वत्स नामरूपं न ते न मे १७ अहो
चित्त कथं भ्रांतः प्रधावसि पिशाचवत् अभिन्नं पश्य चात्मा
नं रागत्यागात्सुखी भवेत् १८ त्वमेव मोहं हि विकारवर्जि
तं स्नेहकंपमेकं हि विमोहविग्रहं न ते च रागो ह्यथवा वि
रागः कथं हि संतप्यसि कामकामः १९ वदंति श्रुतयः सर्वो
निर्गुणं शुद्धमव्ययं अशरीरं श्रीवंत तत्त्वं तं मां विद्धि न संश
यः २० साकारमनृतं विद्धि निराकारं निरंतरं एतत्तोपदे
शेन न पुनर्भवसंभवः २१ एको नेकं समं तत्त्वं वदंते
हि विपश्चितः रागत्यागात्पुनश्चित्तं एकानेकं न विद्यते २२
अनामरूपं च कथं समाधे मोहस्वरूपं परदेस वमेकं

२

५८
66

आत्मस्वरूपं च कथं समाधि अस्तीति नास्तीति कथं समा
धिः २३ एवं परमार्थ हि समं तत्त्वं स्वदेहस्य मजो व्ययः जाना
म्यहं न जानामि आत्मानं मन्यसे कथं २४ तत्त्वमस्या
दिवाक्येन आत्मा हि प्रतिपादितः नेति नेति श्रुतिर्ब्रूया
त् पंचभूतवृत्तं ध्रुवं २५ आत्मन्येवात्मना सर्वं त्वया पू
र्णं निरंतरं ध्याता ध्यानं न ते चित्तं निर्लज्ज ध्यायसे कथं॥
२६ एवं न जानामि कथं वदामि वयं शिवाप्येव परमा
र्थतत्त्वं स्वस्यस्वभावं गगनोपमो हं जानामि तत्त्वं
मतीरूपोहं २७ न संन्यासं समं तत्त्वं कल्पनाहेतुवर्जि
तं ... काने मुक्तं स्वयवेद्यं कथंचन २८ आत्मस्व
रूपं न हि वस्तु केंचित् आत्मस्वरूपं परमार्थतत्त्वं न
हिंसको वापि न जातु हिंसः तत्त्वस्वरूपं न हि वस्तु २९
केंचित्

खेष्वध्रोहं समं तत्त्वं खेदेस्सर्वतोमुखं खेभ्रमः कथमात्मा
वेदवेभ्मोनाहं कथं पुनः ३० घटे भिन्ने घटाकाशं सुलीनं भेद
वर्जितं शून्येन मनसा तद्वदेव परं तेभा तेम ३१ न घटो न घ
टाकाशं न जीवो जीवग्रहः केवलं ब्रह्म संविद्धि वेद्यवे
दकवर्जितं ३२ सर्वत्र सर्वदा सर्वं आत्मानं सहजं ध्रुवं स
र्वं शून्यमशून्यं च तं मां विद्धि न संशयः ३३ वेदा न लोका न
सुरा न यज्ञा वर्णाश्रमं नैव कुलं न जातिः न धूममार्गो न च
दीप्तिमार्गो ब्रह्मैक रूपं परमार्थतत्त्वं ३४ व्याप्यव्यापकता
मुक्तं त्वमेकं सकलं यदि प्रत्यक्षं चापरोक्षं वा आत्मानं मन्य
से कथं ३५ अद्वैतं केचिदिच्छन्ति द्वैतमिच्छन्ति चापरे समं
तत्त्वं न विन्दन्ति द्वैताद्वैतविवर्जितं ३६ श्वेतादिवर्णरहितं श
ब्दादिगुणवर्जितं कथयन्ति कथं तत्त्वं मनोवाचामगोचरं

परेऽहिं मन्यसे सर्वे
५९ ४७ पराहिनन्तुनेसर्वं देहादिगगनोपमं तदाः स्ट्रेत्सर्वे
67. ति नतद्वैतेपरापरं ४८ परेतास हचात्मारहे अरमेन प्रती
भातिमे व्योमाकारं यथेकंच ध्याताध्यानं कथंभवेत् ४९
यत्करोमि यदश्नामि यज्जुहोमि ददामि यत् एतत्सर्वंन
मेकिंचित् रवेशुद्धोहमजोव्ययः ५० सर्वंजगद्विद्धिविशुद्धदेहं
सर्वं सर्वं जगद्विद्धि शिवैकरूपं सर्वंजगद्विद्धिनिराकृतीदं स
र्वंजगद्विद्धिविकारहीनं ५१ तत्त्वंत्वं नहिसंदेहः किंजा
नास्येवापुनः असंवेद्यंस्वसंवेद्यंआत्मानंमन्यसेकथं
५२ मायामायाकथंतात छायाछायानविद्यते तत्वमेकमि
दंसर्वंव्योमाकारंनिरंतरं ५३ आदिमध्यांतमुक्तोहं न
बद्धोहंकदाचन स्वभावनिर्मलः शुद्ध इतिमेनिश्चितामतिः
५४ महदादिजगत्सर्वं नकिंचित्प्रतिभातिमे ब्रह्मैवकेवलं सर्वं क
केवलं

नचाचानैव

यं वर्त्ताव्यमस्थितः ५६ जानामिसर्वथासर्वं अहमेकोनेरंतर:
नैरालंबमपमूर्न्यंच प्रपूर्न्यं व्योमात्स्थं चकं ५६ नपुंसकं नपुमा
न्स्त्री नैयाघोसनकल्पना सानंदं वानैरानंदं आत्मानंमन्य
सेकथं ५७ षडंगयोगान्नतुनैवबुध्दं गुरूपदेशान्नतुनैव
बुध्दं मनोख्येनाघ्नान्नतुनैवबुध्दं वयं चतत्वंवयमेवबुध्दं ५
८ नाहं पंचात्मकोदेहो देहोवर्त्ततेनतहे आत्मैवकेवलंस
र्वं तुरीयं चत्रयंकथं ५९ नबध्दोहं नैवमुक्तोहं नचाहं ब्रह्म
ता:पपृथकु नकर्त्तानैवभोक्ताहं व्याप्यव्यापकत्वं कथम् ६०
यथाजलंजलेन्यस्तं सुलीनं भेदवर्जितं प्रकृतपुरुषस्तथा
अभिन्नं प्रतिभातिमे ६१ जानामित्तपदंरूपं प्रत्यहंगगन
नोपमं तथापरंहिस्त्रुपं यत् मरीच्चिर्जलसन्निभ:परन्नगुरु
नैपदेशाप्स्य नचोपाधिर्नमोक्षया खेदेहमभक्तविध्द खे

८

६०
शुद्धोहं स्वभावतः ॥ ८ ॥ यदि नाम न मुक्तोसि न बद्धोसि क
68 दाचन साकारं वा निराकारं आत्मानं मन्यसे कथं ॥ ९ ॥ ख्वे
शुद्धोसि अशरीरोसि त्वं न ते चित्तं परापरं अहमात्मा परं त
त्वं इति वक्तुं न लज्जसे ॥ ५ ॥ कथं रोदिसि रे चित्त आत्माने
वात्मना भव । पिब वत्स कलातीतं अद्वैतं परमामृतं ॥ ६ ॥
नैव बोधो न चाबोधो न बोधो बोध एव च यस्येदृशो बोधे
सदा बोधे स बोधो नान्यथा भवेत् ॥ ७ ॥ ध्यानं न तत्कीर्ति
समाधियोगो न देशकालौ न गुरूपदेशः स्वभावसंसि
द्धिरहं च तत्त्वमाकाशकल्पं सहजं ध्रुवं च ॥ ८ ॥ न जातो
हं मृतो वापि न मे कर्म शुभाशुभं शुद्धोहं निर्गुणः क
अतो बंधमोक्षौ कथं मम ॥ ९ ॥ यदि सर्वगतो देवः स्थि
रः पूर्णो निरंतरः अंतरं हि न पश्यामि स बाह्याभ्यं

तेरेकथं ६० स्फुरत्येवजगत्कृत्स्नमखंडितंनिरंतरं अहो
मायामहामोह अद्वैतद्वैतकल्पना ६१ नतेचमातानपिताचबं
धुर्नतेचपत्नीनसुतश्चमित्रः नचेपक्षपातोनचेवि
पक्षपातः कथंहिसंतप्तिरियंहिचेतः ६२ दिवानक्तंन
तेचित्तंउदयास्तमनंनहि विदेहस्यशरीरत्वंकल्पयंतिक
थंबुधा ६३ नाविभक्तंविभक्तंचनहिदुःखसुखादिच॥ नहिसर्वं
नमेदेहोनवादेहोवानेममितिममेतिकिं ६४ नाहंकर्त्ता
चभोक्ताचनमेकर्मपुरातनं नहिसर्वमसर्वंचविद्धिचा
त्मानमव्ययम ६५ नमेरागादिकोदोषोदुःखंदेहादिकं
नहि आत्मानंविद्धिमामेकंविशालंगगनोपमं ६६ स
खेमनःकिंबहुजल्पितेन सखेमनःसर्वमिदंवितर्क्यं
यत्सारभूतंकथितंमयाते त्वमेवतत्वंगगनोपमोहं

7

६१ येनकेनरहिभावेन यत्रतत्रमृतःपुनः योगिनातत्रलीयंते घ
69 टाकाशमिवांबरे ६९ धर्मार्थकाममोक्षश्च द्विपदादिचरा
चरं मन्यंतेयोगिनस्सर्वं मरीचजलसंनिभं ७० अतीता
नागतंकर्म वर्तमानंतथैवच नकरोमिनभुंजामिइति
म मेनिश्चलामतिः ७१ शून्यागारेसमरसपूतः तिष्ठंते
ष्ठंतेसुखमवधूतः चरतिहिनग्नस्त्यक्त्वागर्वंविंदतिके
वलमात्मनिसर्वं ७२ नहिनेत यंतुरीयंनहि नहिनाहि
विंदतिआत्मनितत्रं धर्माधर्मौनहिनहियत्र बंधोमु
क्तः कथमिहतत्र ७३ विंदतिविंदतिनहिनहिमंत्रं न
हिनहिछंदोलक्षणंतंत्रं समरसमग्नोभावितपूतः
प्रलपितमेतत्कथमवधूतः ७४ सर्वंशून्यमशून्यंच
सत्यासत्यंनविद्यते स्वभावभावितंप्रोक्तंशास्त्रसंवि

क्षि पूर्वकम् ७५ इतिस्वात्मसंवित्तिउपदेशप्रकरणं समा
प्तं १ खगुणविगुणाः खेभागं वदंति नैवाकें चत् समखेषम
खेभागो सर्वथा नैवाकिंचन् इति खे इति खेहीनं इनेर्मू
लं इनेः प्रपंचं कथामहे खलु खेहन व्योमरूपं शिवं वै १
खेतादिवर्णरहितं च वयं शिवं च कार्याद्विकारणमे
दं च वयं शिवं च एवं खेकल्पखेगतं वयं शिवं च आत्मा
नं आत्मन्यहमेव कथं नमामि २ इनेर्मूलं मूलरहितोहि
सदोदितोहं इनेर्धूमं धूमरहितोहि सदोदितोहं इनेर्दी
प्तिं दीप्तिरहितोहि सदोदितोहं ज्ञानामृतं समरसं गग
नोपमोहं ३ इनेः कामं कामं इह नाम कथं वदामि इनेः
संगं संगं इह नाम कथं वदामि आत्मा कथं कामं इह ना
म कथं वदामि ज्ञानामृतं समरसं गगनोपमोहं ४

अद्वैतरूपमिहनामकथंवदामि द्वैतस्वरूपमखिलंहिक
थंवदामि नित्यंह्यनित्यमखिलंहिकथंवदामि ज्ञानाम
तंसमरसंगगनोपमोहं ५ स्थूलंहिनेन च कृषंनगतागा
तंहि आद्यंतमध्यरहितंनपरापरंहि सत्यंवदामिखे
खलंपरमार्थतत्वं ज्ञानामृतं० ६ संविद्धिसर्वकरणा
निमनोमयानि संविद्धिसर्वविषयान्नमनोमया
न्न संविद्धिसर्वममलंनबंधमुक्तं ज्ञानामृ० ७ दुर्बो
धबोधगहनोनभवामितात दुर्लक्ष्यलक्ष्यगहनोनभवा
मितात आसन्नरूपगहनोनभवामितात ज्ञानामृ० ८
निःपापपापदहनोहि कृतानुतानोहं निर्धूमधूमदहनो
हि कृतानुतानोहं निर्वाणबंधदहनोहि कृतानुतानोहं ज्ञा
नामृ० ९ निर्भावभावरहितोनभवामिवत्स निर्यो

गयोगररहितोनभवात्मेवत्स रनेरष्छिंतरचेितरहितोनभवात्मे
वत्स सानाम॰ १॰ रनेमैरमोहयरेरचेतनमेरविकल्पः रनि:
च्छ्रोकच्छ्रोकपेरचिंतनमेरविकल्पः रनेलेभिलाभपरदेचि
तनमेरविकल्पः सानाम॰ ११ संसारसंततलताननमेकद
रचित संतोषच्छ्रोततसुखंनमेकदाचित अज्ञानबंधनने
दंनचमेकदाचित सानाम॰ १२ संतापसंततरजोनचमे
कदाचित संतापसंततमोहनमेरविकारे सत्वंच्छधर्म
जोनकंचनमेरविकारं सानाम॰ १३ संतापदुःखजोनकं
नमनेकदाचित संतापमोहजनतानेचधीकदाचित
यस्मादहंकृत्यरियेनचमेकदाचित सानाम॰ १४ निःकं
पकंपानेधनंरहिरवेच्छ्रालाच्छ्राल्पे स्वप्नप्रबोधरनेधनंनरने
च्छ्राद्दिनंचरनेसारसाररनेधनंनचरंरहेरकेरचेत सानाम

७

६३ म० १५ नोवेद्यवेद्दकामेद्दंनचहेतुतर्कवाचामगोचरमेदं
71 नमनोनबुद्धिः एवंकथंहिभवतः कथयामितत्वं ज्ञानाम
० १६ यदेसमगगनसहजंस्वयमेवसर्वमेतर्बहिर्वद्कथं
परमार्थतत्वं प्राकुर्मभावनतरं नचवस्तुकिंचित् ज्ञाना
म० १७ स्वप्नत्रयंयद्दनेचैतते कथंतुरीयं कालत्रयंयदि न
चैततेकथंदिशश्च ज्ञातेपदंध्येयपरमार्थमेकं ज्ञानाम०
१८ दीर्घलघुःपुनरिहेतनमेवभागो कोणोनवर्तुलमेहि
हनमेवभागाः एवेसारसंकुचामेतीहनमेवभागो ज्ञा
नाम० १९ मातापितानतनयादिनमेकदाचित् जातंमृते
तेनमनोनचमेकदाचित् एनेव्याकुलंस्थिरपरमार्थत
त्वं ज्ञाना० २० एवेष्वद्यष्वधमवेचारमनंतरूपं एनेलोप
लोपमरवेचारमनादिरूपं एनेः खंडखंडमरवेचारमत

केवलं सोनाम॰ २१ अस्नादयस्सुरगणाः कथं मि॥त्रसेते
स्वर्गादयोवसतयः कथं मि॥त्रसेते यश्चेकरूपममलेप
रमार्थतत्वं सोनाम २२ स्नेनैस्तिनेतोरवेमलोहि कथंवदामि
नरहेश्रुतिश्रुंतरविमलेरहि कथंवदामि स्नेलैंगालैंगारवेमले
रहिकथंवदामि सोना॰ २३ नैःकर्म्मकर्मसततंन कथंकरो
मि स्नेःसंगरूपरहितेपरंरवेनोहं स्नेदेहहेहलेसनासत
तंचनोहं सोना॰ २४ मायाप्रपंच रचनानचमेविकारं
कौटिल्यदंभरचिनांनचमेविकारं सत्यानृतेचरचनान
चमेविकारं सोना॰ २५ न्यालंबहिनमरवलेचनिरामयं
च स्वैमानरूपमरवलेत्युपमारहेहीनं सेस्वेहिसर्व
मततेनतुपूर्णपूर्णो सोना॰ २६ सत्यंवदामिगिरजाव
चनैवजातुः सत्यंवदामिस्वेरजावचनैवजातुः सत्यं

६८
72

कपंरेहसततेनरश्रीवासश्रीवंवे ज्ञानम० २७ संध्यारिको
लयरहितेनरवेयोगायोगाः मध्यप्रबोधररहितेबारहेराध
मूकं एकरवैकलाररहितेनेजमावप्रमुपं ज्ञाना० २८
ना रेवरांपंनाथरवेगातेरहिरनेराकुलवेरनेपत्रिमरवेमरवे
गतेरहितेनेराकुलवे संसोधिसवेरवेगातेरहेरमेराकुलं
वे ज्ञानाम० २९ कांतार मंदेरगातेरहि कपवृरते संदे
भेसंगायरमेरहि कपंधररते रवांतेरंजनसांरहेरने
रंजनेवे ज्ञाना० ३० रनेजीवजीवररहितेसततेरवेभाते
सजीवजीवररहितेसततेरवेभाते रनेवालाबंधररहिते
सततेरवेभाते ज्ञाना० ३१ संभूतवर्जितरमेरंसतते
रवेभाते संसारवर्जितरमेरंसततेरवेभाते रनेः सार
वर्जितरमेरंसततेरवेभाते ज्ञाना० ३२ उदेरवमात्र

मयैतेनच नामरूपे ।नैर्भिन्नभिन्नमत्वे ।तेनाहं वस्तुकेषां चि
नु ।नैर्लज्जमानसकरोसि कथं त्वेषाहं ज्ञाना० ३३९ ।किंनाम
तो रोदसि सखेन च जन्ममृत्युः ।किंनाम रोदसि सखेन च तो वि
षादः ।किंनाम रोदसि सखेन च ते च हर्षं ज्ञाना० ३४० ।किंना
म रोदसि सखेन च ते स्वरूपं ।किंनाम रोदसि सखेन च ते
विरूपं ।किंनाम रोदसि सखेन च ते च रमित्रं ज्ञाना० ३४१ ।किं
नाम रोदसि सखेन च ते चयांसि ।किंनाम रोदसि सखेन
च ते मनांसि ।किंनाम रोदसि सखेन च ते वचांसि ज्ञाना०
३४२ ।किंनाम रोदसि सखेन च ते स्तिकामो ।किंनाम रोद
सि सखे न च ते प्रकाशः ।किंनाम रोदसि सखे न च ते च मोहं न
ज्ञाना० ३४३ एष्वपरमिच्छेत कथं न च ते धनानि एष्वपरमि
च्छेत कथं न च ते हि पत्नी ईष्वपरमिच्छेत कथं न च ते ममे

स्ते ज्ञाना० ३८ लिंगत्रयंरहितमुक्तमित्रनन्तेनमेव स्वेमेद्वैमेदं
नमन्त्रनन्तेनमेच नैराकृतमानसाचेचित कथ्यंखेमेन्त्रः ज्ञा
ना० ३९ नो चारुमात्रमिहतेरहे रविराग रूपं नो चारुमात्र
मपि चेतहे विरागरूपं नो चारुमात्रमपरं चेतरहितं वेकाम्रारू
रू पं ज्ञाना० ४० ध्यातानध्येचेरूपं हिन चेतेसमाधि ध्येयं
नेतेरूपं हिन चलेचेरमूः ध्यानं नतेरूपं हिन चेतसि का
लो ज्ञाना० ४१ यत्सारभूतममलं कथ्यते मयाते नत्वेन
स्व चेह भोजंगुरूनं रक्षीख्यः स्वरूप सहजं परमार्थमेकं
ज्ञाना० ४२ कथ्यमेहपरमार्थतत्वमानेरूपं कथ्यमे
ह परमार्थनैव मानेरूपं कथ्यमेह परमार्थज्ञान रूपं
१६ यत्रेच्छ मस्ति कं वर्तते व्योमरूपं ४३ रहन पवनहीनं
रवैरधैर्ज्ञानमेकं अग्रेन जलरवेहीनं रवेरथैरवे ज्ञानमेकं
ह्वि

सकलगगनहीनं वेद्मि खे ज्ञानमेकं गगनमिव खे ज्ञा
लं वेद्मि खे ज्ञानमेकं ५६ न स्थूलरूपं न खे चान्यरूपं न
सूक्ष्मरूपं न खे सूक्ष्मरूपं रूपं खे रूपं न खे भातिकं खेत्
स्वरूपरूपं परमार्थतत्त्वं ५७ मुंच मुंच नेत्र द्वौ त्यागं
मुंच तु सर्वथा त्यागात्यागं खे युक्तं च अनंततत्त्वं ध्रुवं तथा
५८ खिं इत्ति रवें इते न रहि ना हि मंत्रं ल हरागं ... न रहे न रहेत
त्रं समरसमग्नं भावितपूतः प्रभवति तत्त्वं परमवधूतः
५९ इति श्री स्वात्मप्रत्युपदेशे ज्ञानपंचरत्ने कानेन्द्र
पत्ते नाम तृतीयप्रकरणम् ३ नावाहनं नैव विसर्जनं वा
॥ पत्राणि पुष्पाणि कथं भवंति ध्यानानि मंत्राणि कथं भवंति समं
भवंति कथं समं चैव शिवार्चनं च १ न केवलं बंधविबं
धो बंधः न केवलं शुद्धविशुद्धमुक्तः न केवलं योगवि

योगमुक्तो सर्वैर्विमुक्तो गगनोपमोहं २ संजायते सर्व
रमिदं हितथ्यं संजायते सर्वरमेदं रचेतथ्यं एवं रवेकल्यो
समनैवजातो संरचेरधिरनैवीतामनामयोहं ३ नचां
जनंवारपिरनैरंजनंवा नचांतरंवाप्यंतरंवा ओंत
र्बहिरभिन्नंनमेवेभाति स्वरूपनिर्वाणमनामयोहं
४ अबोधबोधंममनैवजातं बोधस्वरूपंममनैवजा
तं अबोधबोधंचकथंवदामि स्वरूपनिर्वाणमनाम
योहं ५ नधर्मयुक्तोनचपापयुक्तो नमोक्षयुक्तोनच
बंधयुक्तः युक्तंत्वयुक्तंनचमेरविभाति स्वरूपनिर्वा० ६
पराप्परे परस्परंवानचमेकदाचित् मध्यस्थभावोनचार
वा रमित्रं रहित्तांहितंनैवकथंवदामि स्वरूपनिर्वा० ७ नोपास
कंनैवमुपास्यरूपं नचोपदेशोनचमेक्रियापरं सं

स्थितसंस्थितं कथं वदामि स्वरूप० ८ न व्यापकं व्याप्यमे
हास्ति केश्चेत् न चालयं वास्ति निरालयं वा अशून्यपू
न्यं च कथं वदामि स्वरूप० ९ न दायकं नाह कर्म वा कैं
श्चेत् न कारणं वा मम नैव कार्यं अचिंत्यचिंत्यं च कथं
वदामि स्वरूप० १० न केवलं वा मम नैव भेदं न वेदकं
वा मम नैव वेद्यं गतागतं तात कथं वदामि स्वरूप० ११
२२ न चाहरूपम्मे विरहो बुद्धीर्मनो मे न च मेंद्रियाणि॥
रागं विरागं च कथं वदामि स्वरूप० १२ उल्लेखमात्रं न तु हि
रल्लेखमुक्तं कल्लेखमात्रं न निरोहितं च समासमं मे प्र
कथं वदामि स्वरूप० १३ जितेंद्रियोहं त्वजितेंद्रियोहं न
संयमो मे न यमो न जातो जयाजयौ चेत् कथं वदामि स्व
रूप० १४ अमूर्तमूर्तं च न मे करा चेत् नादंतमध्यं न

७५
75.

चमेकदाचेत् बलाबलंरवेतकथंवदामि स्वरूप० १५ म
नेमत्तं वापि रविपर्यपिषंवा स्वेजायन्तेतानमेकदाचेत्॥
अस्युधप्रधंचकथंवदामि स्वरूप० १६ स्वपूप्रबोधंनच
योगात्नेडंनक्तंरदेवावापिनमेरवेभाति अतुयतुर्यंचकथं
वदामि स्वरूप० १७ संरवेरहिमांसर्वविसंमिक्तं ध्याना ये
रविकेकर्मकथंकरोमि मायारवेमायांचकथंवदामि स्व
रूप० १८ संरवेरहिमांसर्वसमाधियुक्तं संरवेरहिमांलरु
रवेलरुयुक्तं योगारवेयोगांचकथंवदामि स्वरू० १९ म
रवेनचाहंनचपंडितोहं मोनंरवेमौनंचंनमेकदाचेत्
रवेत्तर्कतर्कंचिकथंवदामि स्वरू० २० रवेत्तानमात्तानकु
लंनजाति संसारसंभूतनमेकदाचेत् स्वोहंरवेमोह
नचमेकदाचेत् स्वरू० २१ अस्तमत्तोनेवसदारवेतोवा

तेजो न ते जोनं च मे कदाचित् स्वाध्यायादिकं कर्म कथं करो
मि स्वरू० २२ असंज्ञायं खेविहितं निराकुलं वा असंज्ञायं खेवि
हरनेरंतरवा असंज्ञायविधिरनिरंजनवा ।। स्वरू० २३ ध्याना
दि सर्वरितोपरित्यज्यते प्रभुभावप्राप्तं कर्मपरित्यज्यते
त्यागामृतं तातपिवंति धीराः स्वरूपतत्वेपरमंरमंते नहि
२४ खेंडितेखेंडितनारहेमंत्रं छंदोलहरणानरहेनरहितंत्रं
समरससमगनंभावेन पूतः पूतपतेतत्वंपरमवधूतः २
५ इतिश्री स्वात्मखेसुपदेगुरोनेवलिखिपंचखेंगुते काल
तीयधकर्ता ३ उंकार इतिखलुगगनसमानं परापर
[illegible] सार इति सारहते अखेंडलखेंडलनेराकरता
कथमहरंखेंडुसमुत्तरं १ इतितत्वमिसिप्रभृतीरमेः
श्रुतिप्रतिपादितमात्मनेनतत्वमसीति नमुपाधेवरजि

76. सर्व तसर्वसमं रकेमरोदरसेमानसर्वसमं २ अधऊर्धारवेरवे
रजेत सर्वसमं ककुवंसरवेरचेरजैत सर्वसमं यारैचेक
रनेरंतरसर्वसमं रकेम० ३ नरहेकारत्येत कल्परवेचारइ
त्ते नरहेकारराकार्यरवेचारइत्ते परसेधारवेरवेरजैत
सर्वसमं रकेम० ४ नरहे बोधरवेबोधसमारधेइत्ते न
रहेकालरवेकालसमारधेइत्ते नरहेदेशरवेदेशसमाधे
६॥ इत्ते रकेम० ५ नरहेजीवपुनर्नरहेजीवइत्ते नरहेकुंभने
मोनरहेकुंभइत्ते नरहेकाररा कार्यरवेभागाइत्ते रके
म० ६ इहिसर्वनिरंतरमोहपरं लघुदीर्घरवेचाररवेही
नइत्ते नरहेवर्तुलिकोनरवेभागाइत्ते रकेम० ७ इहपमून्य
रवेपमून्यरवेहीनइत्ते इहपृथुरवेपृथुरवेहीनइत्ते इहस
र्वसंगारवेहीनइत्ते रकेम० ८ नरहेभीतरवेरचेगरवेचार

इत्ते बाहेरंतरसंध रसत्पामेरत्ते अखेरमेत्ररवेवर्जितसर्व
समं रकेमु० ९ नरहेत्नोषरवेत्नोषलालप इत्ते नचराचर
मेद्दरवेचारइत्ते इत्तेमाहनेरंतरसर्वसमं रकेमु० १० ने
नुरूपरवेरूपरवेहीन इत्ते ननुरमेत्ररवेरमेत्ररवेमाया इत्ते न
नसगस्पेसमरिवेहीन इत्ते रकेमु० ११ नगुलागुलपात्र
रवेबंध इत्ते मननजीवनकर्म करोषकथं इहपुइ इनेरत
रसर्व इत्ते रकेमु० १२ इहभावरवेमावरवेहीन इत्ते इहकाम
रवेकामरवेहीन इत्ते इहबोधतमंरवतुमोहपदं रकेमु०
१३ इहतत्वानेरंतरतत्व इत्ते नरहेसंधरवेसंधसमागम
ने यरहेसर्वरवि वर्जितसर्वसमं रकेमु० १४ अरवेकार
रवेकाररसमत्यामेरत्ते अरवेलहरवेलहसमत्यामेरत्ते य
इकेवलमात्मने सत्यपरं रकेमु० १५ अनुकेतुकुटी

१३

६९ पारेवारसमं इहसंगाविसंगाविहीनपरं इहबोधाविबोधावि
77 हीन इत्ते रकिमू॰ १६ आविवेकाविवेकमबोधइत्ते अविक
ल्पाविकल्पमबोधइत्ते पारद्वैकानेरंतरबोधइत्ते रकि
मू॰ १७ इहसर्वगात्तेखलुजीवइत्ते इहसर्वनिरंतरजी
वइत्ते इहकेवलमात्मानेजीवइत्ते रकिमू॰ इह नारहेमो
हपदं नरहिबंधपदं नरहिधर्मपदं नरहिपापपदं नरहिपूर्ण
पदं नरहि रेक्तपदं रकिमू॰ १९ पारद्वैताविवर्ताविही
नपदं पारेकारणाकार्याविहीनसमं पारेभेदाविभे
दविहीनपदं रकिमू॰ २० इहसर्वानेरंतर सर्वचित्ता इ
हसर्वस्थने ष्कलसर्वचित्तो विपदार्थविवर्जितसर्व
चित्तो रकिमू॰ २१ अत्ते सर्वनिरंतरसर्वगात्ते अत्ते
निर्मल निष्कलसर्वगात्तं दिनरात्राविवर्जितसर्वगात्ते

रवेकमू० २२ नरहे वंधसमारघेसमागमने नरहेयोगरवेयोग
समागमनं नरहे तर्करवेतर्कसमागमनं रवेकमू० २३ इह
कालत्रयस्यरवेराकरत्वं अनुपीनरूपस्यानेराकरत्वं ७
नरहे केवलतत्वलेराकरत्वं रवेकमू० २४ इह देहरवेदेहाने
राकरत्वं नरहे जागृतरूप प्रभृतकत्तत्वं अत्मेधानरवे
चारवेहानपरं रवेकमू २५ गगनोपमस्वभावेतुलास
मं अतीतेसर्वविवर्जितसर्वसमं गतेसाररवेसाररवेका
रसमं रवेकमू २६ इह धर्मविधर्मविरागपरं इह वस्तुरवे
वस्तुविरागपरं इह कामरवेकामविरागपरं रवेकमू०
२७ सुखदुःखावेवर्जितसर्वसमं इह कोपरवेकोपरवे
हीनपरं गुरुशिष्यरवेवर्जितहीनपरं रवेकमू० २८ नहरा
हरसाररवेसारत्मेरते नचलाचलसाम्यरवेसाम्यस्ते

७० अविकारविकारविहीनमिति एके मु० २९ इह सारसमु
78. च्चयसारमिति कथितं निजभावविबोध इति न हि विष
याकाररतासत्यामिति एके मु० ३० विंदति विंदति न हि य
त्रे छंदोलक्षणं न हि न हि तत्रं समरसमग्नो भावितपूत्रो
प्रभवति तत्त्वं परमवधूतः ३१ इति श्रीस्वात्मसंवित्युपदे
शे निजभावविबोधनं नाम चतुर्थोप्रकरणं ॥४ बहु
धा श्रुतयः प्रवदंति इति वियदादिरिदं मृगतोयसमं
यदि चैकनिरंतरसर्वशिवः उपमा च कथं ह्युपमे
कथं १ अविभक्तिविहीनपरं ननु कार्यविकार
विहीनपरं यदि चैकनिरंतरसर्वशिवः यजनं च क
थं स्तवनं च कथं २ मन एव निरंतरसर्वगतं मन एव
विचारविहीनपरं मन एव निरंतरसर्वशिवः मनसा

रवैरब्रीवं मनचारइते ३ रहे नरावरवैभेदहनेराकरतां ३ रहे
तानुरहितस्यरनेराकरतां यरहेचैकानेरंतर सर्वरब्रीवः
रविचेउसमोज्वलनपक्षकथं ४ गातकाम्यतुभेदहवैभेद
इते गातचेष्टरवैचेष्टरवैभेदइते यरहेचैकानेरंतर सर्व
रब्रीवः बाहेरंतर भातेविसंधकथं ५ नरहेसारवैसा
रवैकारइते ६ हपसूनयरवैपसूनयरवैहीनइते यरहेचैकानि
रंतर सर्वरब्रीवः प्रथमेचकथं चरमेंचकथं ६ यरहे भे
दकभेदहनेराकरतां यरहे वेधकवेधनेराकरतां य
रहेचैकानेरंतर सर्वरब्रीवः द्वितीयेचकथं ततीयंचक
थं ७ गाहेतागाहतं यरहे सत्यरमैरते रवेरहेतारवैरहेतं नाहे
सत्यरमैरते यरहेचैकानेरंतर सर्वरब्रीवः रवेषपेंउ
यबुरहेमनपक्षकथं ८ यरहेकारत्येनलोकानेराकरतां

वैद

यदेकरत्येततौंकानेराकरएां यदेचैकानेरंतरसर्व
रव्रीव: मुरतेयफ्रकपांरहेपुराएाकपां एगानेपचनो
नरहेसत्पारमेस्ते धरएाी दृहनोनरहेसत्पारमेस्ते यदे
चैकानेरंतरसर्वरव्रीव: जलरफ्रकपां सालेलफ्रक
पां १० मरएाामएाएास्पानेराकरएां करएााकरएा
स्पानेराकरएां यदेचैकानेरंतरसर्वरव्रीव: गगा
नागगानफ्रकपांवस्ते ११ प्रकृत्तेपुरुषौ ... रहेभे
दृस्ते नरहेकारएााकार्यविभेदस्ते यदेचैकानेरं
तरसर्वरव्रीव: पुरातोपुरत्तफ्रकपांरहेवस्ते १२ रत
तयंनरहेदुःखसमागामनं गुएात्तयंस्पखागमा
मनं यदेचैकानेरंतरसर्वरव्रीव: गुएादुःखवेचा
रवेनएकपां नेनुमापमवर्णविहीन स्ते नेनु

कारणाकर्तृत्वेहीनइति यदि चैकान्तेनैरंतरसर्वथाजीवः अ
त्वेनष्टत्वेनष्टभवेत्तत्कथं १४ पुरुषापुरुषस्यत्वेन
ष्टइति वक्तेतावक्तेतस्यात्वेनष्टइति यदि चैकान्तेनैरंतर
सर्वथाजीवः अत्वेनोहत्वेनोद्दतत्तेप्यत्रकथं १५ यदि मो
हत्वेपाहत्वेहानिपरं असंज्ञायज्ञोकरत्वेहानिपरं यदि
चैकान्तेनैरंतरसर्वथाजीवः इन्नेरत्नेनमंतकथं रहेमनं १
६ नन्तुय[illegible]त्वेधर्मत्वेनाज्ञा इति नन्तु बंधत्वेबंधत्वेनाज्ञा
इति यदि चैकान्तेनैरंतरसर्वथाजीवः इहदुःखत्वेदुःखम
नप्यत्रकथं १७ नरसितासितवर्णविभागाइति नपरा
परभेदत्वेभागाइति यदि चैकान्तेनैरंतरसर्वथाजीवः ने
नुसारमसारत्वेवशामकथं १८ नतहियाज्ञेकापस
त्वेधानइति नऊतासनवस्तुत्वेधानइति यदि चैक

१२
40.

निरंतरसर्वत्नीवः भवकर्मफलानिभवंरते कथं १९ प
रिपूर्णरवेपूर्णरविहीनइत्ते यद्दिसर्वरवेवर्जेत्तप्रभुहर
रत्ते यद्दिचैकारनेरंतरसर्वत्नीवः इहतकरवेतकविदा
रमेकथं २० उपसंहत बुरहोरवेबुरहोइत्ते उपसंहताभे
दरवेभेदइत्ते यद्दिचैकारनेरंतरसर्वत्नीवः अरवेवेक
रवेवेकमत्तपश्चकथं २१ ननुत्राकावेशाकारवेमुकार
रत्ते अनुपादरवेपादरवेमुक्तइत्ते यद्दिचैकारनेरंतरस
वत्नीवः ननुरागरवेरागमत्तपश्चकथं २२ नरहिमोह
रवेमोहरवेकारइत्ते नरहेलोभरवेलोभरवेकारइत्ते॥
यद्दिचैकारनेरंतरसर्वत्नीवः अहमेरनेरवेचारमत्तपश्च
कथं २३ त्वमहे नरहेएवकदारवेरदेइत्ते कुलजातरवेका
रअसत्यामेत्ते अहमेवत्नीवः परमार्थइत्ते अरवे

वंदनमंत्र करोमि कथं २४ गुरुशिष्यविचारविशीर्णम् इति ।।
उपदेशविचारविशीर्णम् इति अहमेव परंशिवः परमार्थ इति विषम
अभिवंदनमेव करोमि कथं २५ नहि कल्पितदेहविभाग इति
नहि कल्पिततत्वविभाग इति अहमेव परंशिवः परमार्थ इति
अभिवंदनभागं करोमि कथं २६ सरजाविरजानकदाचिद् मैत्र
इति ननु निर्मलनिष्कलबुद्धिरिति अहमेव परंशिवः परमार्थ
इति अभिवंदनमत्र करोमि कथं २७ नहि देहविदेहविवेक
त्वइति नृतंअनृतंच समानमिति अहमेव परंशिवः परमार्थ
इति अभिवंदनमत्र करोमि कथं २८ विंदतिविंदतिनहिनहि
यत्र छंदोलक्षणं नहि नहि तत्र समरसमग्नो भावित
पूतो प्रभवति तत्वं परमवधूतः २९ इति श्री स्वात्मसंवित्
उपदेशे मोहहरणे योगो नाम पंचमप्रकरणं ५ रथ्याक

र्पटविरचितकंथं पुन्यापुन्यविवर्जितपंथं शून्यागारे
तिष्टतिनग्नः शुद्धनिरंजनसमरसमग्नः १ लक्षालक्षवि
वर्जितिलक्षः युक्तायुक्तविवर्जितदक्षः केवलतत्वनिरं
जनपूतः वादविवादकथमवधूतः २ आशापाशविब
धनमुक्तः शौचाचारविवर्जितमुक्तः एवंसर्वविवर्जि
तसंतः तत्वविशुद्धनिरंजनवंतः ३ कथमिहदेहमसा
रविचारः कथमिहरागविरागविकारः निर्मलनिष्कल
गगनाकारं स्वयमिहतत्वंसहजाकारं ४ गगनाकारनिरं
तरहंसः तत्वविशुद्धनिरंतरहंसः एवंकथमिहभिन्नवि
भिन्नं बंधविबंधविकारविभिन्नं स्वयमिहतत्वंविस्तो
यत्रस्वरूपविरूपंकथमिहतत्रगगनाकारसमानोयत्र
विषयाकारस्ताकथमिहतत्र ६ केवलतत्वनिरंतरसर्वं

योगरवेयोगैःकथमेहगावे सन्तमसन्तंनरहिसंसारे एवंक
थमेहसारमसारं ७ केवलतत्वनिरंतरबुध्दंगगनाकार
निरंतरप्रबुध्दं एवंकथमेहसंगत्वेसंगं सत्यंकथमेहरंगवे
रंगं ८ योगरवेयोगैःरहेतोयोगी भोगरवेभोगैःरहेतोभो
गी एवंविचरतेमंदंमंदं मनसाकल्पितपरमानंदं ९ बोध
रविबोधैःसततरवेमुक्तः द्वैताद्वैतकभावरवेयुक्तः सहजारवे
रजाकथमेहयोगी प्रबुधनिरंजनसमरसभोगी १० सत
तंसर्वविवर्जितमुक्तः सततंसर्वविवर्जितयुक्तः एवंकथ
मेहजीवनमरणं ध्यानाध्यानंकथमेहकरणं ११ ६८
जालमिदंसर्वं यथामरुतमरीचिका अखंडितसमाकारं
वर्त्तितकेवलंशिवः १२ इहधर्मपर्यंतंचांनैरीह्यश्चसर्वतः
कथंरागविरागोपि कल्पयंतिरवेरनेप्लवत्तं १३ खिंदंतिखेदं

अवधूतं किमर्थं स्यात् किमर्थं चतुराक्षरं ॥ पृच्छति कार्त्तिकीदेवी ब्रूहि मे परमेश्वर १ अवधूतो वाच ॥
आशापाशविनिर्मुक्तं आदिमध्यांतनिर्मलं आनंदे वर्त्तते नित्यं अकारं तस्य लक्षणं १
वासना वर्जितः येन वक्तव्यं च निरामयं वर्त्तमानेषु वर्त्तेत वकारं तस्य लक्षणं २

तेन रहे न रहे मत्र छहोलहतान रहे न रहे तत्र समरसमगन
मात्वेतपुत्रो प्रभवस्तेन त्वं परमवधूतः १४ इति श्री स्वा
त्मसंवित्युपदेशे दत्तात्रय अवधूतसंवादे नाम षष्ठो प्रक
रण ॥६ आत्मानंदे हि मत्ते रहेत्वा अस्मै नैम्योहमव्ययं कुतो
२ हि कुरुक्षेत्रः क्वाक्वा वर्त्तते न कं पृत्ते १ कर्मणा मनसा वाचा
त्यजेत्वं मृगलोचनां विपत्तास घातकास्सिद्धेः स्वर्गलोक
सुखालयं २ मूत्र श्रोणित दुर्गंध मेधांहार धूपितं चर्म
कुंडं रमंतिसम कर्महस्तेन संन्याय कौटिल्यादंभसंयुक्तं ॥
सत्यशौचं न खेघ्नते केनापि निर्मित नारी बंधनं सर्व
देहिनां ४ त्रैलोक्यजननी धात्री सा भगः नरकं ध्रुवं ॥
तेयोजातो रतिस्तत्र हाहा संसारसंस्थितः ५ जानामि
नरकं नारी ध्रुवं जानामि बंधनं न जानामि कथं वो रत

धूलिधूसरगात्राणि धूतचित्तं निरामयं धारणाध्याननिर्मुक्तं धूकारं तस्य लक्षणं ३
तमोहंकारनिर्मुक्तं तकारं तस्य लक्षणं ॥ तत्त्वचिंता धृता येन

मायया मनधावंति ६ भागाहि कुंडपर्यंतं संरवेधीनरकार्णा
वं ये नरास्तत्र रम्यंते पच्यंते नरके ध्रुवं ७ तेरवेधीनरकं घो
रं भागोच परस्त्रेनेर्मतिं रकिंनपञ्चपत्सेरेरवेत कष्टंतत्रैवधाव
स्सि ८ भागेन चर्मकुंडेन ऊर्ध्वेन वृजेनच रवं रउंतं रहेजगात्
सर्वं सरेवासुरतापसं ९ देहान्तविमहाघोरे पूतेरिपिते
च त्रोणितेरकिनारपेरनेरमंतानारी मंगचवडवानलं १०
अंतरेनरकंरवेरघ्रे कौशेल्यं वर्क्रि मंडले ललनारहेनप
रूपंरंतिमहामंत्रवेरोधनी ११ रकिंत्वं पञ्चपत्सेरेरवेत॥
भागेनरकधूपितं ऊर्ध्वंरौरवं घोरं कष्टंतत्रैवधावासे
यत्रप्रीतिजीवंतं लब्ध्वं भवेत्तत्रैवदेरहेनो यातायातेरति
स्तत्र भोसंसारवरेदेवनं १२ तत्रस्थाने रमंते ये मूढा
वस्थायिनो नराः नेयोरते नरके घोरं सत्यमेवनसंशयः

१४ अग्निकुंडसमो नारी घृतकुंडसमानरः संसर्गेनिखेलीयंते तस्मात्तां परिवर्जयेत् १५ गोडी माध्वीतथापैष्टी खेलेयास्त्रिरवेधासुरा चतुर्थी स्त्री सुरा ज्ञेया ययेदंधारयेत्तिं जगत् १६ मद्यपाने महापापं नारीसंगेतथैव च तस्मात् द्वंद्वं परित्यज्य नरकं पचते ध्रुवं १७ माहिचैव तुयानारी बुध्यारवेमोहितो नरः अस्य स्य कुरुते खेतं नारींचैव त्यजेद्बुधः १८ चित्तेतिधातबंधं त्वरीरं नष्टे चित्ते धातुवारे नाड्यांति तस्माच्चित्तं च सर्वदा १९ रवेदस्तेरवेदरतिन रहेन रहेमंत्रं कुहोलहतानरहेनरहितं त्रं समरससमग्नो भावितपुत्रं प्रभवति तत्त्वं परमवधूतः २० इति श्री स्वात्मरवेतुपरेत्रो दत्तात्रय गीतायां अवधूतसंवादो नाम सप्तम प्रकरणं ७ श्रीरामजी

उम् ब्रह्माहं ब्रह्ममत्पुत्रो जायामे ब्रह्म मत्प्रसूः ब्रह्मैव मे रवि
तारा सर्वाः रक्षे यामे ब्रह्ममद्वपुः १ ब्रह्मरतिर्ब्रह्मता सर्वाः
रक्षेयाकुर्वंतरात्मिकाः ब्रह्माहं ब्रह्मलो ब्रह्म फलं रमे छा
स्मिन्नेतरत् २ ब्रह्मतुर्मे ब्रह्ममन्मित्रो ब्रह्मपद्ध्यमद्वयं स
ह्समत्त्वपरं ब्रह्म द्वयूपमे प्रसूयते च यत् ३ ब्रह्मैव पंचभूता
न्ने ब्रह्मैवान्ने खलं जगत् द्वैताद्वैतरमेदं रवे केचिन्नत्व सर्वं ब्र
ह्मन्नेतरत् ४ ब्रह्मगीतारमेदं नित्यं यो धारयति तत्परः स
र्वभूतसुरवौति ब्रह्मैव फलमाप्नुयात् ५ इति ब्रह्मगीता

९६ 84.

ॐ ॥ श्रीरामाय नमः ॥ श्रीवसिष्ठोवाच ॥ दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानं
तचिन्मात्रमूर्तये स्वानुभूत्येकमानाय नमः शान्ताय तेजसे १
अहं बद्धो विमुक्तः स्यामिति यस्यास्ति निश्चयः नात्यंतमज्ञो
नो तज्ज्ञः सोऽस्मिन्शास्त्रेऽधिकारवान् २ यावन्नानुग्रहः सा
क्षाज्जायते परमेश्वरात् तावन्न सद्गुरुं कश्चित्सच्छास्त्रं
वापि नो लभेत् ३ महानुभावसंपर्कात्संसारार्णवलंघने
युक्तिः संप्राप्यते राम दृढा नौरिव नाविकात् ४ संसारदीर्घरो
गस्य सुविचारो महौषधं कोऽहं कस्य च संसारो इत्येवं केन
विलीयते ५ यस्मिन्देशे हि सत्तज्ज्ञो नास्ति सज्जनपादपः
सफलः शीतलच्छायो न तत्र दिवसं वसेत् ६ सदा संतोऽभि
गंतव्या यद्यप्युपदिशंति न या हि स्वैरकथास्तेषामुपदेशा
भवंति ताः ७ शून्यमापूरितामेति मृत्युरप्यमृतायते आ

अयंजनोभाग्यवर्जितोयतः स्वस्वरूपंस्वकीयंस्वरूपम
ज्ञानन्सविषयेषुसुखवेत्तिजानातिपरंतुपरिपाकेविष
संपृक्तान्नभोजनवत् दुःखमेवाप्नोतीतिभावः १५॥१९

परिज्ञानेनामपिचिंतंकेवलमात्मसु
खायैवोदितंचेन्नहासंसारदुःखव्याप्ताः
प्राणिनः कंशरणंयान्ति

वत्संपरिशिवाभाति विज्ञजनसमागमात् ८ सोसेनेनामपिचिंतं
चेत्केवलात्मसुखोदितं सत्वाः संसारदुःखार्त्ताः कंयांति
शरणंतदा ९ तज्ज्ञानंसचसुज्ञातार्थस्सद्धिमानमखंडितं
सद्धिख्यापविरक्ताय साधायउपदिश्यते १० उपदेशार
कमोरामज्यवस्थामात्रपालने सेपूर्णकारणंप्रहरन्
ख्यपुन्सैवकेवला ११ नचासौनोपिगुरुणा हृदयतेपर
मेपरः हृदयते स्वात्मनैवात्मा स्वयासमत्वेधिया
१२ सर्वएवकलाजेतो रनभ्यासेननश्यति इयंसानक
लात्वंतः सैवजाताभिवर्धते १३ स्वकंठेपिस्थितंवस्तु
यथानप्राप्यतेभ्रमात् भ्रमांतेप्राप्यतेतद्वदात्मापिगु
रुवाक्यतः १४ स्वस्वरूपमजानन्वैजनोयंदैवकंटितः
स्वविषयेषुसुखंवेत्तिपश्चात्पाकेविषान्नवत् १५ बु

ध्याप्यत्यंतवैरस्यं यः पदार्थेषु दुर्मतिः बंधमाप्नोति वासनातो भ
योनरोनासौ सा ईभः १६ यत्सकें स्विरपि संकल्पा न्नरोऽ
स्वानिमज्जते नाकें स्वे दृषि संकल्पात्सुखमक्षयमश्नुते
१७ यथास्वप्ने महूर्तेस्या त्संवत्सरभ्रातभ्रमं तथामाया
विलासोयं जायते जाग्रति भ्रमः १८ योंतःशीतलया बु
ध्या रागद्वेषविमुक्तया सार्क्षिवत्पश्यतीदं हि जीवितं त
स्य शोभते १९ येन सम्यक्परिज्ञातं हेयोपादेयमुज्झता
चित्तस्यांतःस्थितं चैव जाग्रति तस्य शोभते २० हृदया
काशमात्रस्य रवेनाप्नोद्देहनाशतः व्यर्थभूताश्रै शा
श्री चेति नष्टं मस्तेश्रांकया २१ घटादिषु प्रनष्टेषु यथाका
शमखंडितं तथा देहेषु नष्टेषु देहीनित्यमलेपकः २२
नजायते नम्रियते कश्चित्किंचित्कदाचन जगत्

नै व्याधिरस्ति व्याधिर्वातपित्तकफोत्पव्यथा रोषापरादयो न सन्तां तथा दुःखदायिनो न
भवन्ति यथा सहजं तु रोग्य देहं भवं सुखत्विमात्मा ज्ञान यथा तथ्य विवेक ज्ञान रहितं बहिर्मुख
त्वमित्यर्थः

वत्तरूपेण केवलं ज्ञानस्फुरते २३ आकाशात्स्थिरचेत्ती २७।१६
ताः प्रभुः सुस्थो व्ययः स्थीवः पञ्चात्मा सकथं रामजाय
ते प्रयते यथा २४ सर्वमिकात्मरेषु ज्ञात मा रे मध्येते वार्जे
तं भावाभाव विवेर्त्ने मुक्त स्मैत्येम त्वा सुखी भव २५ वरं
सरावहस्तस्य चांडालागार वीथिषु स्मैष्यार्थमस्तं
राम न मोर्ख्यहतजीवितं २६ ने व्याधि न्नीविषं तान तथा
नापदरपि भूतले दुःखाय स्वशरीरोत्थं मोर्ख्यमेतद्य
थानृणां २७ इति श्री योगवासिष्ठे प्रथम प्रकरणं १
श्री वसिष्ठोवाच संयमात्मनः प्रोति मैति संसारस्य मे
मः मद्रेस्यैतौ यान्ति यथाहारमहानिधिः १ ये श्रीन्मेषते २
मेघाभ्यो संसारस्योरयरुपो वासनापाराः संबोधाः हृणे
मेषमनः कुरु २ आयन्ते स्वविकल्पोत्थ स्वविकल्पपरि

५२

86. यान् ज्ञायतेऽद्य संसारो ऽनेःसारइत्यसंभ्रमः ३ परिभा
नैनसर्पत्वं ऽवेजसर्पस्यनभ्रूयते यथातथैवसंसारः
ऽस्थितएवोपभुज्यमानस्ते ४ पुंसोऽनेजमनामोहकारत्वे
नोऽदुःखदःस्मृतः संसारश्चिरवेतालो ऽविचारेणाऽवेली
५ यते ईदृशी राममायेयं यारव्यनाज्ञोनहर्षदा नालस्य
ते स्वभावोऽस्याः पेक्ष्यमाणोवनभ्रूयते ६ ऋतेन्नुऽस्वेवा
मायेयं नात्रवेपवाऽवेमोहिना सर्वांगघ्रोतमप्यात्मा
यथात्मानेनपभूयते ७ यदिदं दृश्यतेऽकिंचित्तेऽन्नास्ति
[illegible] ऽकिमप्येधुवं यथागंधर्वनगरं यथावारिमरुस्थ
ले ८ यत्तु नोऽदृश्यतेऽकिंचित्तेऽस्य मार्धेऽकेंचन ऋवि
नाशं तेरस्तीह सत्स दात्मेतिकथ्यते ९ स्वप्नानरथ्य
तोऽस्फारे समस्तावस्तुजातयः इमास्तापरतोऽवेंबरतेस

व्यापकात्परमात्मनस्सकाशात्स्थिरादस्थिराकारं चंचलं मनः उत्पद्यते स्थिरादस्थिरोत्पत्तौ
दृष्टांतः यथा स्थिरादपि समुद्रादस्थिरा ऊर्मयः उत्पद्यंते तद्वदित्यर्थः १३॥ नदेवमनो यदेतेरं
तरं संकल्पं करोति तेन संकल्पेन जाग्रदवस्थायां संसाररूपं पिंडजालं समुत्पद्यते अतः एव म
रसीवतटद्रुमाः १० सर्वाधिष्ठानस्य परमात्मात्मा सम्यग्दृष्टो रवे नः संक
लीयते उदेत्यसम्यग्दृष्टेस्तु रज्ज्वां सर्पभ्रमो यथा ११ भो ल्पेनैः संसा
गभावनया यांति ते बंधो दर्शितमिव वस्तुतः तथोपशांति तया रः इत्यर्थः
याति बंधो जगत्तिता नवं १२ मनः उत्पद्यते तस्मात्परमतः प १३॥ १५
रमात्मनः ॥ अस्थिरादस्थिराकारं तरंग इव वारिधेः १३
यत्नस्वयं स्वैरमेवाशु संकल्पयति नित्यशः तेनेयमिंद्रजा
लश्रीर्जागति प्रवितन्यते १४ यथा बालस्य वेतालो मत्त
यते दुःखदः असदेवसदाकारं यथा मृढमतेर्जगत्
१५ अत्युत्पन्नस्य कानके कानने कंटके यथा कटक्या
क्लिश्यते नमनानापि हेमधीः १६ तथा संस्य पुरागा
र नेगनानामिंद्रगोचरा ॥ देहकूपं दृशो वास्ति नेतत्स्य परमा
र्थ्यदृक् १७ अस्मस्य दुःखो घमयं ससस्यानेदृशं यज्जगत्
देहपर्वतसर्पादि
इंद्रियगोचरा

अंधभवनमंधस्य प्रकाशं तु सचक्षुषः १८ यथा रवेः सहस्रा
कांशुसहस्रैर्वा भ्रममंडलं भ्रमत्वा खेलीयते तद्वदात्मनीहा खे
लं जगत् १९ आदित्यावर्त्ते रेकैकान्र भ्रम योर्यनभाखेताः
आदित्य एव तेतस्याने वैकिल्पाः स उच्यते २० तंतुमात्रो
भवत्येव पटो यद्वद्विचारतः आत्मतन्मात्रमेवेदं तद्वद्विश्वं
ध्ये खेविचारितं २१ खेषुवल्लीचरखेलासोयं खेचत्सुधाधैकदंते च
खेलीयते च तत्रैव मध्ये कथमतन्मयः २२ यथानतोयतो
रभिन्नाः फेनोर्मिर्हिमबुद्बुदाः आत्मनो न तथाभिन्नं खेष्व
मात्मखेनिर्गतिं २३ आत्मनोधितथा खेषु मात्मन्येवल
यं व्रजेत् मरुस्थेभोजलेवीचि कनके कुंडलं यथा २४ आ
त्मज्ञानाज्जगद्भाति रात्मज्ञानान्नेवर्त्तते रज्ज्वाज्ञानादहि
र्भाति तज्ज्ञानाच्च नेवर्त्तते २५ तस्यार्द्रकृपात्मतत्वस्य खे

स्मृतौ जाग्रत्स्थितं यातं जगत्स्यादीर्घस्वप्नराम जगदन्तमुपैव तत् २६
स्वप्ने जाग्रत्स्वरूपो स्मृतौ जाग्रत्स्वसद्वपुः मृतेर्जन्मान्यस
द्रूपो मृतौ जन्माप्यसन्मयं २७ एवं न सन्न संसारे रतैर्भ्रान्ते
मात्रं वेजृंभते अनुभूयत एवापि रज्जौचेत्सर्वान्नभूरतेनः
२८ इति श्री योगवासिष्ठसारे जगन्मिथ्यात्वं द्वितीयं प्र
करणं २ वसिष्ठोवाच तत्त्वात्मबोध एवैकः सर्वाशा
नाशकारकः प्रोक्तः समाधिशब्देन न तु तूष्णीमवस्थि
तः १ रवेराकारमिदं सर्वं जगत्येव भावयन् यस्तिष्ठेत्सु
वह्नांतस्थः स ज्ञानकवचस्तु रवी २ सहतीतपराले बी
पूर्तौ डिरेन्नीत्राशया यः यस्तिष्ठति स सायो गी स एव प
स्मेपरः २ ब्रह्मोपीक्ष्येषदांतत्वं भावयन्यो न राम्म
ना नोद्वेगी न च संतुष्टः संसारे नावसीदति ४ प

एवंसदसच्चस्थू
लेसूक्ष्मेकार्यका
रणं यावत्तु पदार्थ
कं किंचिन्नास्ति
रकिंतु भ्रान्त्यास
त्तु मिथ्यैवभासते
किंच सर्वमिदं
भूतानस्तानेक
पाबुद्धिरेव
नानानिभव
ति ब्रह्मसत्त
येव एवपूस
ताणाकारात्
नभ्रतेरकोण
किंचित्रास्ती
त्यर्थः २८।३

२० ४४

॥ यापहंतिमादायं नाप्नुयंतिमणाः रहिताः तद्धूमरवेशो दो
षा नाप्नुयंत्तिकदाचेन ७ असंतः स्वसंतोषिकोपयंत्तिप
रेनरं स्वनिजकर्मगुत्वोदारं परिपाकं परेहेतु ६ सोत्वा
प्यसर्पसर्पौप्यं यस्याकंपन ४ च्यते रवेषस्तारचिलमो
हत्वेमोहेकार्यनिष्पातमने ७ स्फारहेकाः प्रतिषेधेनप
थानायातिरंजनं तस्माः कर्म्मफलेनोनस्त पानायाति
रंजनं ८ अंतर्मुखतयास्ते बहिर्वर्त्तिपरोपिसन् प
रिपक्कांतनपानेत्ये स्वेज्ञालु रिवलक्ष्यते ९ अद्वैतस्ये
र्यमायाते स्वेचित्तेचप्रग्रामेगाते योगीनः कर्म कुर्वीति
पश्यंतः स्वप्नवजगत् १० अद्वैयमरत्नं चा रु कल्पांत
लिचयेनवा नत्वसः फलं कं नाप्नोति हेमपंकानतेयथा
११ ततोन्यजस्तेवाकाङ्क्षपोप्पपवस्यमहेप्पवा ज्ञानसं

संतस्त्वंतः श्री संतोष्यसंतएवपरनरंकोपयंत्ति असंतः कोपान्नवप्यापरंक्रोधयंत्ति तर्हि कथमचरंत्ति तत्राह स्वनिजमतेप नेलाअरपेत्तथा आचरंति यथापरः क्रुध्यति ६ तेपाकं भूतं स्वनिजं कर्मप्रति हितुअयमर्थः कोपितेन्यनरे यथा संताबधंते तथा अस्माकं बधो भवति नचेति स्वकर्मपरीहार्यंतथानुबंधोनभवतीत्यर्थः ६॥२

प्राप्ते समये मुक्तो सौ रवेगतताप्ययः १२ गोपदेप द्वीमे
कः स्यात्गुरा काव्याम्बुद कारश्वेतोरश्रेभवनेराम नैराश्यपाले
कताकृतेः १३ अंतःशून्यो बहिःशून्यः शून्यः कुंभ इवांब
रे अंतःपूर्णो बहिःपूर्णः पूर्णः कुंभ इवार्णवे १४ इ रक्षितानी
रक्षितो न स्तौ यस्यांतर्वस्तुरूपेषु सुषुप्तवप यवत्सरतेस मुक्ता र
स्ति कथ्यते १५ परमेरापि धुतसंदेहो जीवन्मुक्तः स्वभाव
तः आत्मने वात्मोरवि निर्वाण स्थिर दीप इवस्थितः १६ अहं
कारमयीं त्यक्त्वा वासनां लीलयैव यः स्ते एव तु ध्येय संत्यागी
जीवन्मुक्तः स उच्यते १७ इदं चत्ते बंधुमे धर्मेयमपदः सं
गानुजागारश्व भासं यो रवेस्यात्ति वेरमेसदद्यां रोगं चमो
गे च यः ॥ सौरते पेतला वात्यत्तां प्रकुर्वते मैत्रेय धर्मे मैत्रेय बद्धे
॥ स्वातं यस्य सैमं समं गलत्स्मेहाम्बु आर्येषु मोपिकुते १८ ह॥
स्त्रीसम्महेकुलसिँहेक्तो ज्ञुपसांकस्तेर

कालत्रयेऽपि अमर्मंनवा दृश्यरूपं नास्त्ये
वेति ज्ञानेन मनसा स कालाय दृह
रूपलिकरण जानंतरा मोहस्तु स्वयमे
वेति... यामि... ॥ २२ ॥

दृश्यं संपरित्यज्य सर्वं दृश्यं प्रशान्तधीः व्योम सोऽन्यतरो योगाः
समुक्तः परमेश्वरः १९ समाधिमथ कर्माणि मा करोतु
करोतु वा हृदयेनात्तसर्वास्थो मुक्त एवोत्तमाशयः २०
नात्मनस्यात्मधीर्बन्धस्तन्नाशो मोक्ष उच्यते बंधमोक्षेन
वेद्येति नित्यमुक्तस्य चात्मनः २१ दृश्यनाशात्ते बोधेन
मनसो दृश्यमार्जने संपन्ने चेदुत्पन्ना परानिर्वाणनि
र्वृति २२ न मोहो न भसः पृष्ठे न पाताले न भूतले सर्वाशा
संक्षये चेतः मोहक्षयमभिधीयते २३ अनंते स्वितत्घनाने
रे निर्विकल्पैकरूपात्ति स्थिते । द्वितीयस्याभावात् को
बद्धः कश्च मुच्यते २४ तस्माद्दुःसमात्रेण मनसो बं
धतां गते मनः प्रशमनेराममोक्षएवाविरक्तीष्यते २५
इति श्रीयोगवासिष्ठसारे तत्तीयं प्रकरणं ॥ ३ ॥

स्वरूपमेव अज्ञानात् अखंडिता याचेतना अंतःकरणा स एवात्मनो मनसंज्ञिकं भूत्वा स्वयं रमेति
सतो धावतीयर्तिर्स्संकल्प तस्मात्संकल्पत्याग एव श्रेयानित्यर्थः १

वसिष्ठोवाच एषा स्वभावाभिमतं स्वतः संकल्प्य धावति चे
तनायमज्ञानात्सेव हि मन आत्मनः १ तस्मात्सर्वगाद्देवात्स
र्वशक्तेर्महात्मनः स्वविभागकल्पनाबुद्धेर्लहरीवोत्थिताम्भ
सः २ अंतःसंकल्पविहितं यं संकल्पेनैव भ्राम्यते येनैव जा
यते तेन वह्निज्वालेव वायुना ३ मनोऽनेनैवाभ्युदितं म
नागेवानवेक्षणात् स्वस्वप्नमरणाकारं देहमारं तं नरवि
धते ४ असम्यग्दर्शनं यस्याद्नात्मन्यात्मभावनं य
द्वस्तुनिवस्तुत्वं तन्मनो विधिराघव ५ अयं सोहमिदं
तन्मे एतावन्मात्रकं मनः तदभावनमात्रेणाविचारेणावि
लीयते ६ उपादेयानुपतनं हेयैकान्तरवेवर्जनं यदेतन्मन
सो रूपं तद्बंधं विद्धि नेतरं ७ मनो हि जगतां कर्तृ मनो हि
पुरुषः स्मृतः मनःकृतं कृतं लोके न शरीरकृतं कृतं ८

यथाजलवर्त्तमानं रजः कतक फलं खेलाप्यपंकाभावेन यत्ते जलं च स्वच्छं करोति तथा मनोपि आत्मनि खेलाप्य खेलयं नाशनं यत्तात्मानं स्वच्छं च कुर्यात्ति १०

स्वेतं कारणामर्थानां तस्मिन्सति जगत्त्रयं तस्मिन्क्षीणे जगत्क्षीणं तच्चिकित्स्यं प्रयत्नतः ९ रामवासनयाबद्धं सु कोर्निर्वासनं मनः तस्मात्रिर्वासनाभाव माहराशु खेवे कतः १० यथाभलेखा ग्राहीने सुधालेपं मषी यथा दृश्यते व स्मेवान्तर्नरमा भूमाथे भूमास्वेका ११ अंतर्मुख तया सर्वे चिद्घस्तौ त्रिजगत्रीतं जुहूतौ तस्तवर्त्तते रा मस्वेत्ता दृश्ये चेभमं १२ यदाज्ञानभावात्तेरकेचि दूहेयोपादेय रवेत् स्पीयते सकलं त्यत्का नदा स्वेतं न जायते १३ घोरं जागतन्मयं स्वेतं मूढं स्वप्नं व्यवस्थितं शान्तं सुषुप्तभाव स्यं स्वेतस्मै हीनं मतं भवेत् १४ खेलाप्यपंकं कतकं रजोर स्यावेतये यथा यथात्मानेन तथा स्वेरहि खेलाप्य खेलयं मनः १५ स्वेतं जानीहि संसारं बंधाश्रेत मुदाहृतं पारं

सर्वसाराद्दिदृश्यत्वत्रिपुत्याह्रेतिरेकं संज्ञानांतेणु कितोनेत्स्यापित्तिनाहि सर्वत्रिस्ताः स्वपयपमकेणवति

यः पुनः ध्यानवान्नाभिचवरन्सन्चनं पूर्वत्तमानत्रीलं एकंस्चित्तं जेतुं न शक्नोति समूढोन
लज्जते र्किं चित्तजये असमर्थो ध्यानवान्विरन्मूढः स्त्राघ्यः २
यः पवनेनैव देहस्थेते न चाल्यते १६ हस्तं हस्तेन संपीडन दं
तैर्दंतां प्रपीडयन् अंगान्यंगैः समाक्रम्य जयदादौ स्वकं
मनः १७ चित्तमेकं न शक्नोति जेतुं स्वातंत्र्यवर्त्तयः ध्यान
वान्विरन्मूढः सस्केलोके न लज्जते १८ एकाग्रमनो देवो
ज्ञेयः सर्वार्थसिद्धदः अनेनात्र फलः ले शः सर्वेषां तज्ज
यं विना १९ अनुद्वेगः श्रेयोमूलः मनुद्वेगाः प्रवर्त्तते जंतोर्मनो
जयादन्यः त्रैलोक्यविजयस्तृणं २० सत्संगो वासनात्यागो ध्या
नं विद्याविचारणं प्राणस्पंदनिरोधश्चेत्युपायास्तेन सो जये २
१ पूर्णामिनरसेसं पूर्णं जिगत्सर्वं सुधाद्रवैः उपानद्गूढपादस्य ननु
चर्मावृत्तैव भूः २२ नाहं ब्रह्मेति संकल्पात् सुदृढं बध्यते मनः सर्वं
ब्रह्मेति संकल्पात्सुदृढं मुच्यते मनः २३ चित्तेत्यक्ते लयं याते है
तमैक्यं च सर्वतः स्त्रिष्यत्तेनु परं ब्रह्म शांतं तत्वमनामयं २४ चि

२३ 91

आधयो मनःपीडा विचारलक्ष्मा
शुक्रे लग्ने मनएव धेयं भावं प्रा
प्तो हृदि न बाध्यते नेरे स्यात् २॥

न्मात्रत्वं प्रयातस्य जीर्णामित्यो सचेतसः योभवेत्परमानंदः के
नासावुपमीयते २५ इति श्री योगवासिष्ठे चतुर्थप्रकरणं ४ व
सिष्ठोवाच राम स्वात्मविचारोयं कोहं स्यामिति रूपकः स्वैत्र
दुःखद्रुम बीजस्य दहने दहनः स्मृतः १ विचारदर्पणालग्नान्धेयो
ध्येयधुरंगतां आधयो न विलुपंते वाताक्षेपलतानिव २ विचा
रध्यात्मविद्यानां ज्ञानेनात्र विहारवेः ज्ञेयं तस्यान्तरे चास्ति
माधुर्यं पयसो यथा ३ विचारेणापरिज्ञात स्वभावस्योदिता
त्मनः अनुकंपा भवंतीह ज्ञस्य विस्फुरितापदः ४ कोहमेदं विश्व
म खिलं केमस्यादिति स्वयं विचारणे रतस्येतस्य स्फुरद्वम
वैज्ञानात् ५ यस्य मौर्ख्यं हियं याति सर्वक्षयेति भावनात् नोदेति
वासना तस्य प्रासस्यांबु मातेभरि ६ वासना संपरित्यागा द्वे
लगाद्युत्परचिंतनात् प्राणस्यंदनिरोधाच्च यथेच्छसि तथा कुरु

दृढस्वभावस्य ब्रह्मरूपस्यानुसंधानान्मूर्खोऽपि विवेकपरो लोके दुःखवत्वाद्विषयजुत्वं
संसारभ्रमणजातं न यांति ब्रह्मरूपतां प्राप्नुयंति भ्रमतमज्ञानरज्ज्वाया मम तवज्ञासमाने
संसारस्य रूपं विषतां विषवदस्मज्ज्ञानां लेयुरिति ७

८ साधुसंगमसच्छास्त्रपरो भवसि सन्मते न दिनैरेव नो मासैः प्रा
हे सन्मते
प्नोषी मो परं पदम् । ध्येयं ८ सत्संगाद्व्यवहारत्वाज्ज्ञवभावनवर्जनात् ॥
ब्रह्मलोकोबु
शरीरनाशादेवांत्वाज्ज्ञावनानप्रवर्त्तते ९ दृढभावनानुसंधानादहे
मूढाभ्यपेराघव रथेषं नेयं त्वामज्ञत्ता ममतं रथेषतामयि १०
सत्यभावेन दृष्टोयं देहे देहो भवत्यलं दृष्टात्वसत्यभावेन व्योमतां
यातिदैहकः ११ सुखवत्त्वगतो येन स्वपूर्देहेनं देहमतटान् प
रेभ्रमरसि हे राम स देहस्तेक्व सांप्रतं १२ देहोहमेतीधीस्त्या
अधुना
ज्या सर्वनाशोऽप्युपस्थिते स्यात्यासानभव्येन सद्धर्मांसे
वेपुष्कली १३ अस्तेकंभावयन्साधुः शांतः स्तोऽस्तगतव्यथा ते
तस्तेसावहंभावः स्वपमेव रचेन शुष्यति १४ सवन्निक्यावबोधे
न स्वस्थान्तः शीतलः सदा निरहंकृतेराकाशोरवे ब्रह्मस्तेन सं
स्थितः १५ अंतः शीतलता यां रहेलच्छायां शीतलंजगत् ॥

भवेनमस्कृतस्वा सचेतना तोपाप्रोपसिर्वाहे ... एकमनुक्रियं सच्चिदात्मा ... यथासत्सुनां सत्तावारणकैर्द्वितीयामा ... साहिताचादताक्रमस्यार्था ॥ ८ ॥ १० सर्वक्रियाणां ... स्वभावे ... कारणपूर्वकं ... सिद्धिभावनता ... मानः सत्त्वस्थो भवतीति ×

× तदाहंकामनाशादाकांक्षितीर्मलोदेहात्मबुद्धिरहितो भवतीत्यर्थ भावनारचेनादेहात्मबुद्धिं न निवर्त्ततीत्यर्थः ३ ॥ १४

१८४ यः एते मनोबुद्धीन्द्रियादयः सर्वे भावा असंतो विद्यमानाः संतो ऽवधानं खेना
सावधानमेतनरेता स्थिताः भासंते कीदृशाश्चिद्विलासांतः चिद्विलासो ऽस्माद्
भवदेव जीवनात्मा येषां तेषु सत्साक्षात्कारेणानुभासते इत्यर्थः ॥
92 तस्मादुपशमपूर्णानां हावरात्मयजात ९६ इति श्रीयोगवासिष्ठे
वासनोपशमनं पंचमं प्रकरणं ५ श्रीवसिष्ठोवाच स्फुरितो
स्नेरेजनोनंतो बोधोहं प्रकृतेः परः चेष्टमानस्तेमं देहं पश्या
म्यन्यशरीरवत् १ नेत्रे हि चिद्विलासांता मनोबुद्धीन्द्रियाद
यः असंतः सर्व एवाहो अवधानं खेनास्थिताः २ आपद्य
चलश्चेतोस्मि जगत्स्मि संचसंपदे भावाभावरचेहीनोस्मि
तेनजीवाम्यनामयं ३ स्नेरीहो स्मिनेराशो ऽस्मि खं वत्स्व
स्थोस्मि निस्पृहः शांतो स्मयहमरूपोस्मि चेतासुरच
लस्थितः ४ चिदेवपंचभूतानि चिदेव भयनत्रयं खेनात
मधुनासम्यक् अहमेवचिदेवाहं ५ सर्वातीतः सर्वगस्पः
खस्मिवायमहोस्थितः यत्र इस्तेतदेवास्मि वक्तुं मां कोरमे
नेतरं ६ मय्यनंतमहाबोधावाप्स्यंजीववीचयः समुदे

संरंति खेलंरंति पूर्ववेश्रांतेस्वभावतः ७ मय्यानंतचिदंभोधौरचि
च्छवीचारिकल्पना उदेतु वास्तमायातु नमेवृद्धिःनक्षयः ८ म
दंशाना दृंतं खेपदं मय्येवलयमागतं अपरोहृदचिदानंद सा
म्राज्य मधुनास्म्यहं ९ सर्वभूतांतरस्थाय नित्यमुक्तचिदा
त्मने प्रत्यक्चैतन्यरूपाय मह्यमेवनमोनमः १० इति श्री
योग वासिष्ठे सारे षष्ठं प्रकरणं ६ श्रीवसिष्ठोवाच ब
हिः कृत्रिमसंरंभोहृदिसंरंभवर्जितः कर्ताबहिरकर्तांतर्लो
के खेहरराघव १ अंतस्त्यक्तैषणःबहिरैकिः हृदिबोधोबहिर्जु
कैरवेहरराघव २ अंतःसंत्य
उः अंतस्त्यागी बहिः संगी लोके खेहरराघव २ अंतःसंत्य
क्तसर्वाशो वीतरागो विवासनः बहिः सर्वसमाचारो लोके
खेहरराघव ३ पूर्णांहृदिष्ठमवष्टभ्य ध्येयत्यागीखेलासन्नी
जीवन्मुक्ततयास्वस्थो लोके खेहरराघव ५ एकोखेमुधबो

ध्येयो यः संसारस्तस्य त्यागेन चितसत्तिश्रीमत्ते साध्ये यत्यागेखेलासनी तामेवंखेधांपूर्णांहिदिष्ठं अचष्टभ्याव लेभ्य

धोहमेति निश्चयवह्निना प्रज्वाल्य द्वैतगहनमेकत्वं सुखीभ
व ५ देहोहंमानपाशेन दृढं बद्धोसि सर्वतः बोधोहंज्ञानख
ड्गेन तं छित्वा सुखीभव ६ अनात्मन्यात्मरतिं त्यक्त्वानेरर्थभा
नाजगत्स्थितो एकनिष्ठतयांतस्थः साक्षिमात्रपरोभवः ७
अजागतस्वप्नेडस्य यत्रैकांपं सनातनं सचेतनं रवेष्टुधंच
तोन्मयोभव सर्वदा ८ माभवग्राह्यभावात्मा ग्राहकात्माच
माभव भावनामखिलां त्यक्त्वा यन्मयस्तन्मयोभव ९ सं
कल्पेनैव संकल्पं मनसैव मनोमुने छित्वा स्वात्मनेस्थितः त्वं
एकेमेतावातेदुष्करं १० कस्त्वायं जडो मूढो देहो भवति राघव
यस्यं सुखदुःखाभ्यामचलः परे भूयसे ११ कमांसरु
धिरादीनि कत्वं चैतन्यरूपविग्रह रवेजानन्नपि देहस्य मात्म
बुद्धिं जहासिकं १२ एतावतैव देवेश परमात्मावगम्यते

एतावतैतावन्मात्रेण परमात्मावगम्यते एके यत्तेत्पत्त आह ॥ अ
यं देहो यत्र काष्ठतोष्ट समत्वेन काष्ठवत्तुल्यत्वेनावगम्यते देहस्य
यत्रेणात्मतुल्यत्वानंतरेव परमज्ञानलीला ॥१॥ १२

हेमुन

काष्टलोष्टसमत्वेन
देहोयमवगम्यते १

तत्पुरोन्यैनेपूब
लोपाते पूवतब
लवत्नमयस्ते २

पश्चादेवास्तमस्तत्वं तत्पुरोगते
परिवलाते विस्फुरस्ते १

१३ अहोनुरंचेचं यत्सत्वं आत्मतरद्वेस्फुरतेनरालां परसत्यमरवेद्या
रच्यं तत्पुरः प्रदेवलाते १४ अन्यत्वित्वेयत्परमंब्रह्मतरदेस्फुरतो
नरालां यन्ममेदमरवेद्यारच्यं तत्पुरः प्रबलायते १५ सर्वत्रैले
रतेयस्यांत भावनासारवेभुक्तिदा भेदबुधेदवेद्यंसर्वधा
तोपरित्यजा ॥१६ इतिश्रीवासिष्टसारे प्रज्ञाने रूपतोनामस
प्तमप्रकरणं ७ श्रीवसिष्टोवाच यदेदेहं पृथक्कृत्यस्वे
स्वेरवेधम्यातेष्टरसि तदात्तत्लीकत्तात्तोषः स्वयमेकोभव
ष्यसि १ येनेदंवेत्सि तत्तूत्मानांकुरुप्रत्यञ्जुखं मनः ततःप्र
क्तप्राक्रूपत्वं ऽ ह्यसि स्फुटमात्मनः २ येनशब्दं रसंरूपंगंधं
जानासि राघव तमात्मानंपरंब्रह्मजानीहिपरमेश्वरं ३ य
त्रभावारहे स्पंदते नेर्मयंते चयेन च तमेवात्मानमात्मानंरू
पेजानीहि राघव ४ यत्तत्रेयमिदं तत्त्वं नेतिसर्वंयपुक्तिभिः प्रा
यद्यदिदं तत्वमेतेनेयंजगत्संबंधेनतत्तयुक्तनेत्यैर्नेतित्तिसंत्य त्य
जन्यागोकयमारोयदवशिष्टं सर्वाधीवधिभूतंचिन्मात्रंनेरवधेरनेवधस्यासंभवात् नञो
रूपंप्राप्यसोहमस्मीतिपुनः भावयचिंतय १

यत्रात्मनि भावाः पृथिव्यादयः
पदार्थाः स्पंदन्ते चेष्टन्ते येनात्मना
स्नेर्मीयंते उत्पाद्यन्ते

सर्वदेहिनां ताहृताहकसंबंधे सामान्ये साधा
रणसर्वं योगी तेन यत्मावधानतं नदेत्वावातमनो
यर्ति नवपुष्पानिति

पा वैरवृक्षिं रचिन्मागं सोऽस्मि सोऽस्मीति भावयप ज्ञानेन भवतो
भिन्नं ज्ञेयं ज्ञानात्पृथक् न रहे अतो न त्वं तरत्नं केचित्तस्माद्भेदो
न खेद्यते ६ कस्मात्वेद्भुत्स्वि वेदाद्या यद्यत्कुर्वति सर्वतः तदहं
स्विद्वपुः सर्वं करोमीत्येवाभावय ७ अहं सर्वस्मिन्देहे सर्वेपर
मात्माहमव्ययः न भूतं नास्ति नो भावे मत्तो न्यादि इति भावय
८ एकं ब्रह्म स्विदाकारं सर्वात्मकमखंडितं निष्प्रपंचं भूरेवा
भूषणमिति भावयतत्ततः १ नाहं न चान्यद्वास्तीति अलेवा र
स्तीति निरंतरं ज्ञानेनपूर्णं सर्वत्र ध्यानदेहाद्युपास्यतां १० ग्रा
ह्यग्राहकसंबंधे सामान्ये सर्वदेहिनां योगी नासावधान
त्वे यत्तत्र्चनमात्मनः ११ इति पञ्चयोगाचारोष्टश्चात्माचनं
नाम ए ८मं प्रकरणं ८ वसिष्ठोवाच तस्मिन्देहे इयाहीनां सं
घाते स्फुरति स्वतः अयं सोहमिति भावः स जीवो मलगुंठितः १

यथा स्रजि मालायां भ्रमादुत्थितः सर्प्पः मालाज्ञानान्मालायामेव लीयते तथात्मनि भ्रमोत्थि
तो भेदः आत्मस्वरूपस्याधिष्ठानस्य ज्ञानादात्मन्येव लीयते ८

सर्व सृष्टि रचि हाका ज्ञानं ज्ञाने ते घन रने भ्राये १ स्पात्तै याते ज्ञानमें याति
जीवा रने: भ्रम हदीपवत् २ स्वमह त्वं यथा पेख्य कादि क्षिप्रो उ
रीहया भ्रंगीकरोति मूढ त्वं तथा जीवतमीच्छर: ३ भ्रम सात
मेव सकल्प भ्रमेरो रे शरीरकं जीव: पद्मपत्ते मूढात्मा वा
लोय स्यरमे वोत्यं ४ मत्से भ्रमके पथे भ्रत्वं २ श्रीप्रुरध्यस्य वलाते ।।
भ्रध्यस्यात्माने रेहादीन्मूढ स्तव हे चेष्टते ५ रज्जि ग सर्प्प: परे
ज्ञातो न सर्प्प भयदो यथा जीव सर्प्प: परे ज्ञात: तथा दु:खे
नेदु: खदः ६ स्रजि सर्प्पो यम ध्यस्तो मालायामेव लीयते भ्रा
त्मनः प्रोक्षेतो भेद: भ्रात्मन्येव विलीयते ७ नैकम प्यंगदा यथैव
यथैकं हेम संस्थितं उपाधि भेदने कोयं तथात्मैक: स्वरूप
त: ८ शरीरे वयवा यद्वदिकाराः पवयपामरः भ्रद्वैतं द्वैत वज्ञा
रते तथा स्थावरजंगमं ९ मत्तोतो यघ्नतार ज्ञेय सिकमप्यानन्तंय

च्या भात्यनेकमिवात्मापि तथा धीस्थनुरवेबत: १० धूलधूमांबु
दै: यथा मलैनीकयते नभ: परामृष्टस्तथैवात्मा विष्णुघ्न: प्रा
कृतै: गुणै: ११ अग्निसंगाद्यथा लोह मग्नित्वमुपैति द्वारते आ
त्मसंगात्तथा गात्रं त्वात्मतामेति ड्यारूढे के १२ अहं नूयो हन्नूपते राङ्
गृहीतेन यथेंदुना तथानुभवमात्रात्मा हृन्मुखेनात्मावलोक्यते
१३ आत्मनो जड संगात्स्यादनात्मत्वं जडस्य तु स्यादात्म सं
गादात्मत्वं जडात्मनो: संगवर्त्मिप्र: १४ असत्यं जडरूपेण
ज्ञानयनादिवद्वपुर्जनु: महाजलगतो ह्यग्निरेवरूपं स्वरू
क्ते १५ इक्षौ गुडस्तिले तैलं काष्ठेवह्निर्हविर्घृतं पय: धेनावाज्यं
वपुष्यात्मा लभ्यते चैव यत्नत: १६ स्फटिकात्मनि नीरंध्रे
स्थितं खं वा स्थितं यथा तथा सर्वपदार्थेषु चिद्रूप: परमे
श्वर: १७ बाह्यांत: स्थ कुंजोतिरंत्नकुंभ प्रदीपवत् स्वप्रका

अंतःकरणचतुष्ट्यात्‌भिन्नः१

शृतद्युषैवकेस्वरूपमात्मनोत्पया १८ दर्पणेप्रतिबिंबितोह्यर्कः प्रका
शांकुरुते यथा तथाप्रकाशयत्यात्मा स्वच्छधीषुप्रतिबिंबितः १
९ यत्रास्थितेयांविषयपश्यंप्रतिभामात्ररूपता रज्जौभुजं
वद्भाति स्वयमात्मासदोदितः २० आद्यंतरहितः सत्यश्चिद्रू
पोनिर्विकल्पकः आत्मा निरूपितोकाशो जीवस्याद्यः प
रात्परः २१ आत्मास्वेष्टचैतन्यस्वरूपः शाश्वतोविभुः नि
र्विकारः स्वयंज्योतिस्वभावोर्कप्रकाशवत् २२ आत्मानुभ
वमात्रात्मा सर्वगः सर्वसंश्रयः प्रकाशानन्यचैतन्याद्य
(आधार) स्तिरेकोनलोमवत् २३ चेतयतिस्वेन्मात्रः परमात्माव
भासकः सबाह्याभ्यंतरव्यापीनैष्कलोनिष्कलाप्रत्ययः
२४ यथात्मास्वेन्मयास्वच्छः प्रबुद्धोपचयच्युतः हेमृता
ह्योरश्चितोरेश्वाकालजात्याद्यसंगतः २५ अस्तांडेचयथावा

येत्रास्मिन्निरस्थिता इयंश्रीसंसारश्री माप्रतिमामात्ररू पिताः स्फुर्तिरूपा सती रज्जौ भुजंगव भ्रायेनभातिस आत्मासद्गुरुदि तेः प्रकाशोस्ति यथारज्ज्वज्ञानं सर्पभ्रमोत्पाद कं तथात्माज्ञानं विषयस्फूर्ति करमेतपर्वः

९२
96

चिरंनराभोगे आभरतो व्योम्नि रवौ धरायां खेचरकोत्थपानां तेया स्वेत्सैव कीटकोटरसमान्य
कीटकमध्ये समोमग्नाके समोनागे इत्यादिश्रुतेः २

यु सर्वभूतगतस्तथा स एव भगवानात्मा रमेत्यमुक्तो व्यवस्थि
तः २६ एवं चिद्गगनाभोगे भूधरे व्योम्नि भास्करे धरास्वेव
रकोत्थाया सैव चित्कीटकोटरे २७ न बंधोस्ति न मोक्षोस्ति ब्र
ह्मैवास्ति निरंतरं नैकमस्ति न च द्वैतं संवित्स्फारं विजृंभते
२८ ब्रह्म चिद्ब्रह्म भुवनं ब्रह्म भूतपरंपरा ब्रह्माहं ब्रह्म मच्छत्रु
ते ब्रह्ममात्मीयबांधवाः २९ चित्यकलना बंधस्तन्मुक्तिर्मुक्ति
रुच्यते चिन्नित्यस्वितमात्मेति सर्वसिद्धांतसंग्रह ३० चिदिह
सोहं चिन्मात्रमेवेदं चिन्मयमेव च चिन्नं चेद्दहमेवेति लोका
स्थितिरिति संग्रह ३१ परस्तिपरमात्मेति तदात्मस्वरूपं यन्ना
न्यतोभाति न चान्यदस्ति स्वभावसंवित्प्रतिभाति केवला
ग्राह्यंग्रहीतेति मृषाविकल्पः ३२ इति श्रीयोगवासिष्ठे
सारे आत्मरतिरूपणं नाम नवमं प्रकरणं ९ वसिष्ठोवाच

धा

दृश्यदर्शनसंबंधेत्र भवेत्परमं सुखं तदेवैकांतसंवेद्यं मनोना
शः परं पदं १ दृश्यदर्शनसंबंधे सुखसंवेदनं तमा दृश्यसं
बंधलीनो बंधस्तन्मुक्तामुक्तिरुच्यते २ एषु हंसस्सतोर्मध्ये प
देलक्ष्यावलंबनात् सबाह्याभ्यंतरं वेपदं मानहानारवेमुंच
मो ३ जाग्रज्जडदृश्योर्मध्ये यस्तत्वं परमार्थिकं अनंताकाशमाह
द्यं तं सदा प्रपद्ये सर्वदा ४ दृश्ये दृश्यस्य सत्संबंध इत्यभिधी ग
यते दृश्यादृश्यवस्तुद्वयोः दृश्याभावं खेमुच्यते परदर्शनं
प्रथमाभास मात्मानं समुपास्महे ५ दृश्यदर्शन दृश्यानि त्य
क्त्वा वासनया सह ६ द्वयोर्मध्ये गतं नित्यमस्तीनास्तीति प
द्वयोः प्रकाशकं प्रकाशानामात्मानं समुपास्महे ७ स्वेदा
हौ जागरस्यांते यो भाव उपजायते तं भावं भावयन्साक्षाद
हयानंदमश्नुते ८ प्रशांतसर्वसंकल्पा या शिलावदवस्थिति

जागृत्स्वप्नेद्भावेमुक्तायासास्वरूपास्थितेःपरा ९ जडत्तांवर्जेयित्वैकंशीलायाह्रद्पंचयत् अमनस्कंमहाबाहोतन्मयोभवसर्वदा १० सत्यानेदरवेदाकाशस्वरूपःपरमेश्वरःमहाभाजनेषुमद्देवसर्वत्रास्तिपृथक्स्थितः ११ अपरावारवेस्तारसेरवेसरलेलवलानेःस्वेदेकारणंवमेकोयंस्वयमात्मारचेजेभते १२ भरितामूषहिकुंभेअनंताकाश्निर्भरं एकंवस्तुजगत्सर्वस्वेन्मात्रंयालेचांबुधेः १३ स्नेरंश्चात्वारहेमुत्वाचतथा,नपश्चरभावतः ब्रह्मव्योम्निनिर्भेद्होस्ति चेतन्यंब्रह्मरोरघेकं॥ १४ स्नेस्तरंगोस्तिगंभीरःसाज्ञानेद्सुधार्णवः माधुर्येकरसाधारएकएवास्तिसर्वतः १५ समस्तारवल्वेदंब्रह्मसर्वमात्मामतंःअहमन्याइदंचान्यदित्यरवंडनरवंडयं १६ यदेवब्रह्मणोरूपंतत्तंबुध्यमरवंडेत्तं तदात्वेस्तीर्णःसंसारपर

यदिति त्वंभव्योसि ब्रह्मज्ञोसि तर्हि ब्रह्म निष्क्रयात् सर्वपापौघ वे नोचेद्ब्रह्मस्तुक्तं भस्मनि होमवत् त्वमेवो व
॥ खेमातत त्वे नापादमेवा भ्रस्यमहं ब्रह्मास्मीति तत्र दृष्टांतमाह कर्त्तक फलना प्रिय हतोसत्तिजलेप्र
साहकं न भवति॥ २०

मेघच्छन्नताम्बरः १७ समस्तमेव [illegible] ब्रह्मेति भावितेब्रह्मवैपुमा
न यातिमर्त्ते मत्तामयः कोनामनभवेदिति १८ भव्योसि चेत्तर
देतस्मात्सर्वपापौघान्निष्क्रयात् नोचेद्धक्तापिसंप्रोक्तंत्वयम
स्मि निहामवान् १९ आखेवेक्ष्माततत्वेन त्वयामस्यामिदं सदा न
नाममात्रात्कत्तकफलमंबुप्र[illegible]कं २० अहमेवपरंब्रह्म वा
सुदेवाख्यमव्ययं इतिस्यान्निश्चयोमुक्तो बद्धएवान्यथा भवे
त् २१ नेति नेतीति नेतीति शेषितंयत्परंपदं निराकर्तुमशक्यत्वा
त्तदस्मीति सुखीभव २२ आत्मानंसततंब्रह्म खेहि चैवंनिरंतरं
अहंध्याता परंध्याता मखंडखंडसे कथं २३ सोहंखेन्मात्रमे
वेति चिंतनंध्यानमुच्यते ध्यानस्यविस्मृतिःसम्यक् समाधेर
स्मेधीयते २४ ब्रह्माकारमनोवृत्तेः प्रवाहोहंकृतिं विना संप्र
ज्ञातः समाधिः स्याज्ज्ञानाभ्यासप्रकर्षतः २५ कल्पान्तवायुयो
वांतुयांतुचैकत्वमर्णवाः तपंतुद्वादशादित्या नास्तिमेमनसो
= प्रवाहस्तु

हृदोयद्युपदेश ने हृदि: कमले जोपिवा॥ नथा खिनभवेत्खस्य ॥ सर्वविस्मरणा इत्यन्यपरा रो सर्वब्रह्म धीभावेत्त १९ मानुभ्रेस्मेव भवति यथा अमतेपीतेस ति कोनामाम नमयोनभव ति ॥ १८

निरंतरं ब्रह्मैवा त्मानंजानीहि अखंडब्रह्मध्या नेध्येयभावेन कथंखंडयसि २३ आह

खेन्मात्रं ब्रह्मास्मीतिस्मर णं ध्यानं तस्यविस्मरणं समाधि॥ २४॥ ५ संप्रज्ञात २

98

॥ सर्वभूतानामुत्पत्तिनाशसाक्षिभूतायाश्चितेः पूर्णानंदरूपायाः ताश्चितिः स्वरूपामवस्थां पश्यति विचारवान् १ २६

रक्षितैः २६ याश्चितिः सर्वभूतानामुत्पत्त्यपायसाक्षिणी तां पश्यति
पश्यतां वस्थां पूर्णानंदघनाम्नतं २७ मनोहरं ज्ञप्तमिदं सर्वं यत्
किंचित्सचराचरं मनसोह्युन्मनाभावाद्द्वैतं नैवोपलभ्यते २
८ यत्स्वरं सर्वं ज्ञातं यस्यां तज्जगतः स्थितेः स्वेदासांदखेला
सात्मास एकोत्र स्वेदाकृतेः २९ श्रुतेहेतु लयेरती मत्तेहरात्मत
या जगत्तेपरे मोहत्वात्तस्तुपुरा परे मुच्यते तामुदगाः स्वरवे
लेन नेरी हत्तमात्मतयातुपनः ३० दोषबुद्ध्योभयातीतो नैष
धाम्नि नेर्वर्तते गुणबुध्या च वेरहितं न करोति यथार्भकः ३१
अनुत्कीर्णा यथास्तंभे संस्थिता पुत्तलभंजिका तथा विश्वं स्थि
तेतेन तेन शून्यं न तत्परं ३२ यथा न पुत्रिकाशून्यः स्तंभोनुत्की
र्णपुत्रकः तथा भाति जगज्जालं तेन शून्यं परं गतं ३३ सौम्यांभ
सि यथा वीचि न चास्ति न च नास्ति च तथा जगज्जालमाद शून्या
शून्यं परंगतं ३४ इति श्रीयोगवासिष्ठसारे ज्ञानप्रकरणं
समाप्तं ९ पोह रर १२८९१ हासमूलेनराजे कीर्यतेना श्रीरामजी

पुत्रिका ५

श्रीरिः सर्पः रज्जिरयिता स्वकुंचकं मोचनात्तु राघयममात्मत्तयास्वप
लेन जगहेनउरगः सर्पस्तां स्वरवेते त्यक्त्वा पुनरात्मत्वेन नावलोक
ते इयमहि इति न वेत्ति तथा ज्ञानी देहमितिनो भावः ॥२२॥५

॥ श्रीः ॥

श्रीसरस्वत्यै नमः करं धूनयन्तं सुखं स्वात्मयन्तं हसन्तं स्वतेजो

रमे भूतांस्तं वरं मि स्वभक्ते प्रदातारमाद्यं सुराराणां गरोनुन्नान्नमी

ने सनुं नमामि १ श्रीशंकराचार्यविनिर्मितस्य करोम्यहं सा

धनपंचकस्य टीकां मनोज्ञां बुद्धिमो ह्रबी जो सद्युक्तियुक्तां कले

भूधराख्यः २ इह खलु परमकारुणिको भगवान्सकललोकहेतो

वतारो भवभयस्तेिच यद्दुस्तरसमुद्र निजसूक्ततरस्तो तारणे केव

लिको प्रवि उवंशरत्नाकरचंद्रमाः श्रीमच्छंकराचार्यः स्वदेहमुत्

र्तिको प्रविश्य नियमात् वेदो नित्यमधीतामित्यादि पंचभिः

श्लोकैः ॥ ॥ वेदो नित्यमधीयतां तदुदितं कर्म स्वनुष्ठीयतां

तेन स्यास्य विधीयतामपचितिः काम्ये मतिस्त्यज्यतां पापौघः

परिधूयतां भवसुखे दोषोनुसंधीयतां मात्मेच्छा व्यवसीयतां नि

जगृहात्तूर्णं विनिर्गम्यतां १ ॥ भो शिष्य वेदो नित्यमधीयतां

पठ्यतां ननु कदाकरतत्राह नित्यं सर्वदा ननु कदाचित्करणे चेत

वेदस्य वेदः पृथक्संसामनुनोक्ता वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो यत्र यत्राश्रमे

वसन् इहैव लोके तिष्ठन् ब्रह्मलोकाय कल्पत इति न केवलं
वेदपठनं क्रियतां किंतु मोक्षेछ्या तदुदितं वेदप्रतिपादितं कर्म
संध्यादिकं स्वनुष्ठीयतां सम्यक्प्रकारपूर्वकं क्रियतां मो
क्षेछ्या काम्ये मतिस्त्यज्यतां काम्यं कर्म न क्रियतामित्यर्थः
ननु काम्यकर्मत्यागः कथं भवेत्तत्राह मोक्षेछ्या भवसुखे
दोषोनुसंधीयतां भवः संसारः तत्रत्यं सुखं तत्र दोषो ऽनित्य
सातिशयत्वादिरूपोनुसंधीयतां मनसि चिंत्यतां काम्यदोषदर्श
ने सति तद्विषयकामनाया अभावात्काम्यकर्मत्यागो भव
त्येव तर्हि किं करणीयं तत्राह तेनेशस्य विधीयतामपचि
तिः मोक्षेछ्यास्तेन कर्मणा ईशस्य ब्रह्मणो परिचितिः पूजा क्रि
यतां सर्वाणि कर्माणि ब्रह्मण्येवार्प्यतामिति भावः नन्वेवं
किं जायते तत्राह पापौघः परिधूयतां निष्कामकर्मणा पा
पसमूहः क्षीयतामित्यर्थः तथा च भगवद्गीतायामर्जुनं प्रति
भगवता ब्रह्मार्पणतयैव कर्मणां करणमुपदिष्टं कर्मण्ये
वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचिन मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सं

गोस्त्वकर्मलीत्यादिबहुरमेपद्धैः एवंसतिकिंजायते तत्राह
भोरश्रीष्याः आत्मेच्छाव्यवसायःक्रियतां पुनःकिंकर्त्त
व्यमतआह भोश्रीषाः आत्मेच्छाव्यवसायेसतिरनिजग
हात्पूर्तां श्रीधुंरवेरवेश्यतां रवितंबानरक्रियतां यहहरेवंरविर
जेतदहरेवपूजजेरश्रितिप्युतेः १ पुनःकर्त्तव्यमाह श्लो० स
गः सत्सुविधीयतां भगवतोभक्तिर्दृढाधीयतां शान्त्यादिःप
रिचीयतां दृढतरंकर्ममाशुसंत्यज्यतां सद्वि˘उपसर्प्यतां प्र द्वानु
तिदिनंतत्पादुकेसेव्यतां ब्रह्मैकाक्षरमर्थ्यतां श्रुतिशिरोवा
क्यंसमाकर्ण्यतां २ भोश्रीष्याः संगःसंगतिःसत्सुसाधु
षुविधीयतां क्रियतां भर्त्रुहरिणाचसत्संगतिप्रशंसाकृ
ताजाड्यंधियोहरतिसिंचतिवाचिसत्यंमानोन्नतिंदिशतिपा हं
पमपाकरोतिचेतःप्रसादयतिदिक्षुतनोतिकीर्त्तिंसत्संगतिः
कथयकिंनकरोतिपुंसाम्‌ सत्सुसाधोश्चिद्यमानेप्रशस्तेभ्य
र्हितिरिचिसन्नित्यमरः रवेपूर्वस्यधान्यःकरोत्यर्थत्वाद्विधीय
तामित्यस्यक्रियतामित्यर्थः तथाचोक्तं रवेपूर्वोधाःकरो

100

त्पर्यमृष्टमिपूर्वस्तु भाषतो संपूर्वैर्मितेने प्रोक्तो नेपूर्वास्याप
नेमत्तइति। भोरव्रीष्याः भगवतो नेरवतैश्वर्यसंपन्नस्याभ
क्तिर्दृढाव्यभिचारिणी धीयते धार्यते ऐश्वर्यस्य समग्रस्य
स्य वीर्यस्य यशसः श्रियः ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग
इतीगना। उत्पत्तिं प्रलयं चैव भूतानामागतिं गतिम् वेत्ति वि
द्यामविद्यां च स वाच्यो भगवानिति। भगः कीर्तिरस्यास्तीति भ
गवान् भगो स्त्रीकामं माहात्म्यं वीर्ययत्नार्ककीर्तिष्वित्यमरः
। भोरविशिष्याः ज्ञानादिः परिचीयते ज्ञानादीनां परिचयः
त्ति क्रियते। अष्टाङ्गेन यमो परेति तेहाभ्यासमाधानाख्याः
पंचमगध्येते एषां लक्षणानि सर्वेष्ववासनात्यागः ज्ञामो यस्मिति
ज्ञानितः निग्रहो बाह्यवृत्तीनां दमइत्यभिधीयते १ विषयेभ्यः प
रावृत्तिः परमोपरतिर्हि सा सहनं सर्वदुःखानां तितिक्षा सा
शुभा मता १ निगमाचार्यवाक्येषु भक्तिः श्रद्धेति विश्रुता चि
त्तैकाग्र्यं तु सल्लक्ष्ये समाधानमिति स्मृतम् १ भोरविशिष्याः दृ
ढतरं कर्मापि सत्यज्यतां दृढतरमासक्ति विशिष्टं फललिप्सा

संयुक्तं कर्माप्रवृत्तिधं संत्यज्यतां मोक्षेषिष्याः सद्विद्यानुपस
र्प्यतां सद्विद्वान् वेदांतशास्त्रवेत्तारं उपसर्प्यतां तमुपास्य
तां मोक्षेषिष्यस्तत्पादुके सेव्यतां मोक्षेषिष्याः एकाक्षरब्रह्म
ॐकारस्वरूपं मर्थ्यतां मोक्षेषिष्याः श्रुतिशिरोवाक्यं समुत्क
र्ष्यतां वेदांतशास्त्रश्रूयतामित्यर्थः २ वाक्यार्थश्च विचा
र्यतां श्रुतिशिरःपक्षः समाश्रीयतां दुस्तर्कात्सुविर
म्यतां श्रुतिमतस्तर्केणनुसंधीयतां ब्रह्मैवास्मि विभाव्यतां
महरहर्गर्वः परित्यज्यतां देहेहंमतिरुज्झ्यतां बुधजनैर्वादः
परित्यज्यतां ३ क्षुद्व्याधिश्च चिकित्स्यतां प्रतिदिनं भिक्षौ
षधं भुज्यतां स्वाद्वन्नं न तु याच्यतां विधिवशात्प्राप्तेन संतुष्य
तां शीतोष्मादिर्विषह्यतां न तु वृथावाक्यं समुच्चार्यतां
मौदासीन्यमभीप्स्यतां जनकृपानैष्ठुर्यमुत्सृज्यतां ४
मोक्षेषिष्याः वाक्यार्थः द्वादशमहावाक्यैर्विचार्यतां मो
क्षेषिष्याः श्रुतिशिरःपक्षो वेदांतपक्षः समाश्रीयतां मो

५३

101

रवीष्या: कुस्तर्कोस्तु रम्यतां रवेवाम: स्क्रियतामित्यर्थ: मोरवी
ष्या: प्रवृत्तिमतस्तर्कानुसंधीयतां प्रवृत्तिर्वेदवाक्यं तद्वान्
प्रवृत्तिमान् तस्य प्रवृत्तिमतस्तर्कोनुसंधीयतामनुचिंत्यतां
प्रवृत्तिलिंगवाक्यप्रकरणस्थानसमाख्यानां पूर्वपूर्वबली
यँ स्त्वमिति जैमिनिसूत्राच्छ्रुतेर्बलीयस्त्वं मोरवीष्या: अहह
ह: अस्माहमस्मीति रवेमोच्यतां मोरवीष्या: मार्व: परेत्य
ज्यतां मोरवीष्या: देहेहंमतिरुज्यतां देहएवाहमित्यहंका
रस्त्यज्यतां मोरवीष्या: बुधजनैर्विद्वज्जनैर्वाद: परेत्यज्यतां
२ मोरवीष्या: क्षुद्व्याधिश्चिकित्स्यतां क्षुद्रूपया व्याधे:
श्चिकित्सा क्रियतामं ननु केनौषधेन चिकित्सा कर्त्तव्या
तत्राह मोरवीष्या: भैक्षौषधं भुज्यतां भैक्षरूपेणौ
षधेन क्षुद्व्याध्यपनय: क्रियतामिति भाव: मोरवीष्या:
स्वादन्नं न तु याच्यतां स्वाद्वन्नमेवाम्नवस्मेत्ति यत्नो न क्रि

वा

यत्तां तर्हि किं कर्त्तव्यमत आह भोः शिष्याः स्वेष्टे वस्त्वात्प्रा
प्तेन संतुष्यतां यद्दैववशात्प्राप्यते तेनैव संतोषः करणीयः
भोः शिष्याः शीतोष्णादि विषह्यतां द्वन्द्वमेव भगवद्गीतायां
मर्जुनं प्रति भगवतोपदिष्टं मात्रास्पर्शास्तु कौंतेय शीतो
ष्णसुखदुःखदाः आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व
भारतेत्यादिना भोः शिष्याः वृथा वाक्यं न तु समुच्चार्यतां
भोः शिष्याः औदासीन्यमभीप्स्यतां भोः शिष्याः जनकृपा
नैष्ठुर्यमुत्सृज्यतां जनेषु कृपा रक्ष्यतामित्यर्थः ६
एकान्ते सुखमास्यतां परतरे चेतः समाधीयतां पूर्णात्मासु
समीक्ष्यतां जगदिदं तद्बाधितं दृश्यताम् प्राक्कर्मप्रविलाप्य
तां चितिबलान्नाप्युत्तरैः श्लिष्यताम् प्रारब्धं त्विह भुज्यता
मथ परब्रह्मात्मना स्थीयताम् ५ ॐ नमः ॥ भोः शिष्याः
पूर्णात्मासु समीक्ष्यतां सर्वत्रात्मैव परिपूर्णस्थितिर

॥५४
102
त्तेस्त्राप्यत्तां ननुजगत्तोरहितीयत्ताप्रत्यक्षोपलंब्धात्कथंपूर्णो
त्मदृष्टिर्निःसंभवतीत्तत्राहजगदहंत्तद्बाधित्तंद्रष्टुपत्तांस्त्राय
तां इत्थं प्रत्यक्त्वगत्तंसमाधयत्तरवर्त्तिचैतत्रोरूपं अरस्सस्त
विप्रकर्षंत्तरहितेत्तिपरोहं हविजानीयादितित्तो ननुकुत्रस्थि
तापूर्णात्मानंपश्यामस्तत्राह भोविद्योष्ट्याः एकांत्तेसुख
मास्यत्तां एकांत्तेजनसंचाररहित्तेप्रदेशेयथासुखंभव
त्ति तथास्यत्तांस्थीयत्तां तत्रस्थित्वा भोविद्योष्ट्याः परत्तर
ब्रह्मत्तिचेत्तःसमाधीयत्तां समाधिरस्थितेमनःक्रियत्तामि
तिभावः इत्थमेवभगवत्ताऽर्जुनंप्रत्युक्तं गीत्तायांषष्ठेध्याये
योगीयुंजीतसत्ततमात्मानंरहसिस्थितः एकाकीयत्तचि
त्तात्मा निराशीरपरिग्रहः योगफलंचोक्तं युंजन्नेवंस
दात्मानं योगीनियत्तमानसः शांतिंनिर्वाणपरमां मत्सं
स्थामधिगच्छति भोविद्योष्ट्याः चित्तबलात् ज्ञानबलात्प्राकृ

र्मपूर्वजन्मार्जितं कर्मप्रविलाप्यतां उत्तरेष्वपि कर्मस्वतो नश्लि
ष्यतां तदधिगमे उत्तरपूर्वाघयोरश्लेषविनाशौ तद्व्यपदेशादिति शा
रीरकसूत्रमत्र प्रमाणं भोगेनैवेष्या: ६६ जगात्ते प्रारब्धं क
र्मभुज्यतां भोगादृते कर्मणो विनाशाभावात् तदुक्तं नाभु
क्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि भोगक्षीणाः अथ प्रा
रब्धभोगानंतरं परब्रह्मात्मनास्थीयतां तथा च श्रुतिः त
स्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्ष्ये अथ संपत्स्य इति: ५ यः श्लो
कपंचकमेतमपठन्मनुष्य: संचिंतयत्यनुदिनं स्थिरतामु
पेत्य तस्य संसृति वनानलतीव्रघोरताप: प्रशांतिमुपयाति स्या
|| चितिप्रसादात् ६ अथ नेत्र श्लोकपंचकपठनेफलं दर्शयति ||
य: मनुष्य इमं श्लोकपंचकमनुदिनं स्थिरतामुपेत्य संचि
तयति तस्याप्याशु अघसंसारेवानलतीव्रघोरताप चितिप्रसादा
प्रसादात् प्रशांतिमुपयातीत्यन्वय: ६ इति श्रीशंकराचार्यवि
रचितस्य साधनपंचकस्य टीका समाप्ता १५ शुभं राम जी

१५५

103.

५६

104.

रामनारायणदास का रजिस्टर्ड नंबर है।

42 ३ 5687 है।

जन्म का दिन - १२-२-२६ है।

प्र. निवासीजी ने लिखा है।

श्रीरामायनमः॥तपोभिःक्षीणपापानांशांतानांवीतरागीनां
मुमुक्षूणामपेक्षोयमात्मबोधोभिधीयते१बोधोन्यसाधने
भ्योहिसाक्षान्मोक्षैकसाधनं पाकस्यवन्हिवज्ज्ञानंविनामोक्षो
नसिध्यते२अविरोधितयाकर्मनाविद्यांविनिवर्तयेत् विद्या
विद्यांनिहंत्येवतेजस्तिमिरसंघवत्३अवछिन्नइवाज्ञानात्तन्ना
शेसतिकेवलःस्वयंप्रकाशतेह्यात्मामेघापायेंशुमानिव४
अज्ञानकलुषंजीवंज्ञानाभ्यासाद्विनेर्मलं कृत्वाज्ञानंस्वयंन
श्येज्जलंकतकरेणुवत्५संसारस्वप्नतुल्योहिरागद्वेषादिसं
कुलःस्वकालेसत्यवद्भाति प्रबोधेसत्यवद्भवेत्६तावत्सत्यंज
गद्भातिशुक्तिकारजतंयथा यावन्नज्ञायतेब्रह्मसर्वाधिष्ठानम
द्वयं७उपादानेखिलाधारेजगंतिपरमेश्वरे सर्गस्थितिल
यंयांतिबुद्बुदानीववारिणि८सच्चिदात्मन्यनुस्यूतेनित्येविष्णौ
प्रकल्पिताःव्यक्तयोविविधाःसर्वाःहाटकेकटकादिवत्९य
थाकाशोहृषीकेशोनानोपाधिगतोविभुःतद्भेदाद्भिन्नवद्भातित

१२१ ञ्चाकाशादेकवद्भवेत १० नानोपाधिवशादेव जातिवर्णाश्रमाद
105. यः आत्मन्यारोपितास्तोये रसवर्णादिभेदवत ११ पंचीकृतमहा
भूतसंभवं कर्मसंचितं शरीरं सुखदुःखानां भोगायतनमुच्य
ते १२ पंचप्राणमनोबुद्धि दशेंद्रियसमन्वितं अपंचीकृतभू
तोत्थं सूक्ष्मांगं भोगसाधनं १३ अनाद्यविद्यानिर्वाच्याकार
णोपाधिरुच्यते उपाधित्रितयादन्यमात्मानमवधारयेत १
४ पंचकोशादियोगेन तत्तन्मयइव स्थितः शुद्धात्मा नीलव
स्त्रादियोगेन स्फटिको यथा १५ वपुस्तुषादिभिः कोशैर्युक्तं यु
क्त्यवघाततः आत्मानमांतरं शुद्धं विविच्यात्तंडुलं यथा १६ सदा
सर्वगतोप्यात्मा न सर्वत्रावभासते बुद्धावेवावभासेत स्वच्छेषु
प्रतिबिंबवत १७ देहेंद्रियमनोबुद्धिप्रकृतिभ्यो विलक्षणं तद्वृ
त्तिसाक्षिणं विद्यादात्मानं राजवत्सदा १८ व्यापृतेष्विंद्रियेष्वात्मा
व्यापारीवाविवेकिनां दृश्यतेभ्रेषु धावत्सु धावन्निव यथा
शशी १९ आत्मचैतन्यमाश्रित्य देहेंद्रियमनोधियः स्वकीया

र्थेषुवर्त्तंति॥सूर्यालोकंजनायथा २० देहेंद्रियगुणान्कर्माण्यमले
सच्चिदात्मनि अध्यस्यंत्यविवेकेन गगनेनीलेमादिवत् २१
अज्ञानान्मानसोपाधेः कर्तृत्वादीनिचात्मनि कल्प्यंतेंबुगतेचं
द्रेचलनादियथांभसः २२ रागेछासुखदुःखादि बुद्धौसत्यांप्रव
र्त्तते सुषुप्तौनास्तितन्नाशे तस्माद्बुद्धेस्तुनात्मनः २३ प्रकाशोर्क
स्यतोयस्यशैत्यमग्नेर्यथोष्णता स्वभावःसच्चिदानंदनित्यनिर्म
लतात्मनः २४ आत्मनःसच्चिदंशश्च बुद्धेर्वृत्तिरितिद्वयं संयो तो
ज्यचाविवेकेनजानामीति प्रवर्त्तते २५ आत्मनोविक्रियानास्ति
बुद्धेर्बोधोनजात्विति जीवःसर्वमलंज्ञात्वा ज्ञाताद्रष्टेतिमुह्यति
२६ रज्जुसर्पवदात्मानंजीवंज्ञात्वाभयंवहेत् नाहंजीवःपरात्मेति हे
ज्ञाताचेन्निर्भयोभवेत् २७ आत्मावभासयत्येकोबुद्ध्यादीनीं
द्रियाण्यपि दीपोघटादिवत्स्वात्माजडैस्तैर्नावभास्यते २८ स्वबो
धेनान्यबोधेछा बोधरूपतयात्मनः नदीपस्यान्यदीपेछा यथा
स्वात्मप्रकाशने २९ निषिध्यनिखिलोपाधीन्नेतिनेतीतिवाक्यतः

१२२ विद्यादैक्यं महावाक्यैर्जीवात्मपरमात्मनो ३० आविद्यकं शरीरा
106. दि दृश्यं बुद्बुदवत्क्षरं एतद्विलक्षणं विद्यादहं ब्रह्मेति निर्मलं ३१
देहान्यत्वान्न मे जन्म जराकार्श्यलयादयः शब्दादिविषयैः संगो नि
रिन्द्रियतयान्न च ३२ अमनस्त्वान्न मे दुःखरागद्वेषभयादयः अप्रा
णो ह्यमनाः शुभ्र इत्यादि श्रुतिशासनात् ३३ निर्गुणो निष्क्रियो नि
त्यो निर्विकल्पो निरंजनः निर्विकारो निराकारो नित्यमुक्तोस्मि
निर्मलः ३४ अहमाकाशवत्सर्वं बहिरन्तर्गतोऽच्युतः सदा सर्व
समः शुद्धो निःसंगो निर्मलोऽचलः ३५ नित्यशुद्धविमुक्तैकम
खंडानंदमद्वयं सत्यं ज्ञानमनंतं यत्परं ब्रह्माहमेव तत् ३६ एवं नि
रंतरं कृत्वा ब्रह्मैवास्मीति भावना हरत्यविद्याविक्षेपान् रोगा
निव रसायनं ३७ विविक्तदेश आसीनो विरागो विजितेंद्रियः
भावयेदेकमात्मानं तमनंतमनन्यधीः ३८ आत्मन्येवाखिलं दृश्यं
प्रविलाप्य धिया सुधीः भावयेदेकमात्मानं निर्मलाकाशवत्सदा
३९ रूपवर्णादिकं सर्वं विहाय परमार्थवित् परिपूर्णचिदानं

ज्ञातृज्ञानज्ञेयभेदः परेनात्मनिविद्यते १

२ स्वरूपेणावतिष्ठते ५० चिदानंदैकरूपत्वाद्दीप्यते स्वयमे
वहि ५१ एवमात्मारणौ ध्यानमथने सततं कृते उदितावगति
ज्वाला सर्वाज्ञानेंधनं दहेत् ५२ अरुणेनैव बोधेन पूर्वंतु तमः
सिहृते ततआविर्भवेदात्मा स्वयमेवांशुमानिव ५३ आत्मा
तु सततं प्राप्तोप्यप्राप्तवदविद्यया तन्नाशे प्राप्तवद्भाति स्वकंठा
भरणं यथा ५४ स्थाणौ पुरुषवद्भ्रान्त्या कृता ब्रह्मणि जीवता
जीवस्य तात्त्विके रूपे तस्मिन्दृष्टे निवर्तते ५५ तत्त्वस्वरूपानु
भवादुत्पन्नं ज्ञानमंजसा अहं ममेति चाज्ञानं बाधते दिग्भ्रमं
यथा ५६ सम्यग्विज्ञानवान्योगी स्वात्मन्येवाखिलं स्थितं एकं
च सर्वमात्मानमीक्षते ज्ञानचक्षुषा ५७ आत्मैवेदं जगत्सर्व
मात्मनोन्यन्नविद्यते मृदो यद्वद्घटादीनि स्वात्मानं सर्वमीक्ष
ते ५८ जीवन्मुक्तस्तु तज्ज्ञानात्पूर्वोपाधिगुणांस्त्यजेत् सच्चि
दानंदरूपत्वाद्भवेद्भ्रमरकीटवत् ५९ तीर्त्वा मोहार्णवं हत्वा रागा
द्वेषादिराक्षसान् योगी शांतिसमायुक्त आत्मारामो विराजते

१२३ यद्दृष्ट्वा नापरं दृश्यं यद्भूत्वा न पुनर्भवः यज्ज्ञात्वा नापरं ज्ञेयं तद्ब्रह्मे
त्यवधारयेत् ५५
५० बाह्यानित्यसुखासक्तिं हित्वात्मसुखनिर्वृतः घटस्थदी
107 व पवच्छुद्धः स्वान्तरेव प्रकाशते ५१ उपाधिस्थोऽपि तद्धर्मैरलिप्तो
व्योमवन्मुनिः सर्वविन्मूढवत्तिष्ठेदसक्तो वायुवच्चरेत् ५२
उपाधिविलयाद्विष्णौ निर्विशेषं विशेन्मुनिः जले जलं वि
यद्व्योम्नि तेजस्तेजसि वा यथा ५३ यल्लाभान्नापरो लाभो यत्सु
खान्नापरं सुखं यज्ज्ञानान्नापरं ज्ञानं तद्ब्रह्मेत्यवधारयेत्
५४ तिर्यगूर्ध्वमधः पूर्णं सच्चिदानन्दमद्वयं अनन्तं नित्यमेकं
यत्तद्ब्रह्मेत्यवधारयेत् ५५ अतद्व्यावृत्तिरूपेण वेदान्तैर्लक्ष्यते
द्वयं अखण्डानन्दमेकं यत्तद्ब्रह्मेत्यवधारयेत् ५६ अखण्डानन्द
रूपस्य तस्यानन्दलवाश्रिताः ब्रह्माद्यास्तारतम्येन भवंत्या
नंदिनोऽखिलाः ५७ तद्युक्तमखिलं ज्ञाने व्यवहारस्तदन्वितः तस्मा
त्सर्वगतं ब्रह्म क्षीरे सर्पिरिवाखिले ५८ अनण्वस्थूलमह्रस्वम
दीर्घमजमव्ययं अरूपगुणवर्णाख्यं तद्ब्रह्म० ५९ यद्भासा भा
स्यतेऽर्कादि भास्यैर्यत्तु न भास्यते येन सर्वमिदं भाति तद्ब्रह्म०

तं
६० स्वयमंतर्बहिर्व्याप्य भासयन्नखिलं जगत् ब्रह्म प्रकाशते वह्नि:
प्रतप्तायसपिंडवत् ६१ जगद्विलक्षणं ब्रह्म ब्रह्मणोन्यन्न किंचि
न ब्रह्मान्यद्भाति चेन्मिथ्या यथा मरुमरीचिका ६२ दृश्यते श्रू
यते यद्यद्ब्रह्मणोन्यन्न किंचन तत्त्वज्ञानाच्च तद्ब्रह्म सच्चिदानंद गं
गं मद्वयं ६३ सर्वगं सच्चिदात्मानं ज्ञानचक्षुर्निरीक्षते अज्ञानच
क्षुर्नेक्षेत भास्वंतं भानुमंधवत् ६४ श्रवणादिभिरुद्दीप्तज्ञा
नाग्निपरितापित: जीव: सर्वमलान्मुक्त: स्वर्णवद्द्योतते स्व त्
यं ६५ हृदाकाशोदितो ह्यात्मा बोधभानुस्तमोपहृत् सर्वव्या
पी सर्वधारी भाति भासयतेखिलं ६६ दिग्देशकालाद्यनपे
क्ष्य सर्वगं शीतादिहृन्नित्यसुखं निरंजनं यः स्वात्मतीर्थं भज
ते विनिष्क्रियः स सर्ववित्सर्वगतोमृतो भवेत् ६७ इति श्री
आत्मबोधः समाप्तः श्री रामजी १८९१ मङ्गोरपौ

१२८

108. श्रीरामायनमः श्रीमहादेवउवाच अथतेकथयिष्या
मि रहस्यमतिदुर्लभं सीताराममरुत्सूनोः संवादंमोक्ष
साधनं १ पुरारामायणेरामो रावणंदेवकंटकं हत्वा
रणेरणश्लाघ्यं सपुत्रबलवाहनं २ सीतयासहसुग्री
व लक्ष्मणाभ्यांसमन्वितः अयोध्यामगमद्रामो हनुम
त्प्रमुखैर्वृतः ३ अभिषिक्तःपरिवृतो वसिष्ठाद्यैर्महात्म
भिः सिंहासनेसमासीनः कोटिसूर्यसमप्रभः ४ दृष्ट्वा
तदाहनूमंतं प्रांजलिंपुरतःस्थितं कृतकार्यंनिराकां
क्षं ज्ञानापेक्षंमहामतिं ५ रामःसीतामुवाचेदं ब्रूहितत्त्वं
हनूमते निःकल्मषोयंज्ञानस्य पात्रंनौनित्यभक्तिमा
न् ६ तथेतिजानकीप्राह तत्त्वंरामस्यनिश्चितं हनू

मत्तेप्रपन्नाय सीतालोकरवेमोरहिनी ७ सीतोवाच रामं
खिहिपरंब्रम्ह सच्चेरानंदमहयं सर्वोपाधिरवेनेर्मकं
सत्तामात्रमगोचरं ८ आनंदंनेर्मलं शांतंनिर्विकारं
नेरंजनं सर्वव्यापिनमात्मानं स्वप्रकाशमकल्मषं
९ मारवेहिमूलप्रकृतिं सर्गस्थित्यंतकारिणी तस्य
सन्नेध्यमात्रेण सृजामीदमतंद्रेता १० तत्सानिध्या
न्मयासृष्टं तस्मिन्नारोप्यतेबुधैः अयोध्यानगरेजं
न्म रघुवंशेतिनेर्मलं ११ विश्वामित्रसहायत्वं
मरवसंरक्षणंततः अहिल्याशापशमनं चाप
भंगोमहेश्वरेतुः १२ मत्पाणिग्रहणंपश्चात् भार्गवि
स्यमदक्षयः अयोध्यानगरेवासो मयाद्वादशवा
र्षिकिः १३ दंडकारण्यगमनंविराधवधएवच मा

१२५
109.

यामारीचमरणं मायासीताहरनेस्तथा १५ जटायुषो
मोह्लाभः कबंधस्यतथैवच शबरीपूजनंपश्चा
त् सुग्रीवेणसमागमः बालिनश्चवधःपश्चात् सी
तान्वेषणमेवच सेतुबंधश्चनलधौ लंकायाश्चनि
रोधनं १६ रावणस्यवधोयुधे सपुत्रस्यदुरात्मनः
रबिभीषणोराज्यदानं पुष्पकेणमयासह १७
अयोध्यागमनंपश्चा उाजेरामाभिषेचनं एवमा
दीनिकर्माणि मयैवचरितानिच १८ आरोप
यंतिरामेस्मि रत्नेरवेकारखिलात्मने रामोन
गच्छतिनरत्ते इतिनानुशोचन नाकांक्षतेत्यजातेनो
कुम्कत्तेनरकिंचित् आनंदमूर्त्तिरचलःपरिणामही

नो मायागुणाननुगतोहतथारवेभारते १९ श्रीमहा
देवउवाच ततोरामःस्वयंप्राह हनूमंतमुपस्थितं
श्रृणुतत्वंप्रवक्ष्यामि ह्यात्मानात्मपरात्मनां २० आका
शस्ययथाभेद स्त्रिविधोदृश्यतेमहान् जलाशये
महाकाशस्तदवछिन्नएवहि २१ प्रतिबिंबाख्यमप
रं दृश्यतेत्रिविधंनभः बुद्ध्यवछिन्नचैतन्यमेकंपूर्ण
मथापरं २२ आभासस्त्वपरोबिंबभूतमेवंत्रिधा
चितेः साभासबुद्धेःकर्तृत्वमवछिन्नेविकारिणि
साक्षिण्यारोप्यतेभ्रांत्याजीवत्वंचतथाबुधैः
२३ आभासस्तुमृषाबुद्धिरविद्याकार्यमुच्यते २४ अ
विछिन्नंतुतद्ब्रह्म विछेदस्तुविकल्पितः अवछिन्नस्य
पूर्णेनएकत्वंप्रतिपाद्यते २५ तत्वमस्यादिवाक्यै

अवछिन्न
अविकारी
साक्षी विषे
आरोपण क
रते हैं भ्रांत
करके नैसे
जीवत्व कूं
अबुधी

पक्ष साभासस्याहमस्तथा एकाज्ञानयदोत्पन्नं मह
वाक्येन चात्मनोः २६ तदा रवेद्यास्वकार्यैश्च न भूयते
वनसंभूयः एतद्विज्ञाय मद्भक्तो मद्भावायोपपद्यते
२७ मद्भक्तैरवैमुखानां हि भूलक्ष्ममात्रेषु सह्यतां न
मोनं न च मोहः स्यान्नैषां जन्मभूतैररवे २८ इदं र
स्यं हृदयं ममात्मनो मयैव साक्षात्कथितं तवानघ
॥ मद्भक्तिहीनाय कदापि न त्वया दातव्यमैंद्रादपि
राज्यतोधिकं २९ श्रीमहादेव उवाच एतत्ते रमे रहितं दे
वि श्रीरामहृदयं मया अतिगुह्यतमं हृद्यं पवित्रं पाप
नाशनं ३० साक्षाद्रामेण कथितं सर्ववेदांतसंग्रहं
यः पठेत्सततं भक्त्या स मुक्तो नात्र संशयः ३१ ब्रह्मह
त्यादिपापानि बहुजन्मार्जितान्यपि नश्यंते च न संदे

हो रामस्यवचनं यथा ३२ जानते ओघोरतेपापी परधन
परदारेषुरतेचोरितोवा स्तेयीब्रह्मघ्नमातापितृवधाते
रतः स्वामिरतेरापकारी यः संपूज्यार श्रीरामंपठतेच
हृदयंरामचंद्रस्य भक्त्या योगींद्रैरप्यलभ्यंपदमवेत
भवतेसर्वदेवैः संपूज्यः ३३ इतिश्रीरामहृदयंसमाप्तं॥
श्रीरामायनमः अथसिद्धगीता सिद्धाऊचुः उ१९६ अयसमायोगा
त्स्पानंरजिघ्नोयः यस्तत्स्वात्मतत्त्वोऽयंरत्नेस्यंदंसमुपास्महे १ ॥१८
त्रीन्द्रियारिन्त्यक्त्वा वासनयासहा इन्द्रनिप्रथमाभासमात्मानंस
मुपास्महे २ द्वयोर्मध्यगतंनित्यमस्तिनास्तीतिपक्षयोः प्रकाशकंप्रकाशं स
म्यानामात्मानंसमुपास्महे ३ यस्मिन्सर्वंयस्यसर्वं यतःसर्वंयस्मा
दिदं येनसर्वंयदिदंसर्वंतत्सत्यंसमुपास्महे ४ अकारस्केहकारांतमत्रो
पाकारसेस्थितं आजस्त्रमुच्चरंतंस्वंतमात्मानमुपास्महे ५ संत्यज्यह
्हेस्थानंदेवमन्यंप्रयांतिये तेरत्नमपमिवाहुरित्यक्त्वाहस्तस्थकौस्तु

भाः६ सर्वोज्ञाः स्वेकेलसंत्याज्यफलमेत्र७ वाप्यते येनात्र्यादिषवली
।।।. त्वं नोमूलमूलाचिली यते ७ बुध्वाप्यैतिवेरस्य यपदार्थेषु कुर्मतिः ब
ध्नातिभावनाभूयो नरान सोगाधमः ८ उरस्थितानुरस्थितो नेतानिंऽया
रान्पुनःपुनः हन्यारुद्धिचेकरंडेन वज्रेणोवहरिणरिलू ९ उपक्राम
सुखमाहरेत्पवित्रं समवस्तः सममरत्ते साधुचेतः प्रवृत्तिमेतम
नसः स्वकेस्वरूपे भवरतेसुखेस्थितः कृतमाचिराय १० इतिश्री
श्रीभगवानुवाच ज्ञानंपरमगुह्यंमेयद्विज्ञानसमन्वितं सरहस्यं
तदंगंच गृहाणगदितंमया १ यावानहं यथा भावो यद्रूपगुणकर्म
कः तथैवतत्त्वविज्ञानमस्तुतेमदनुग्रहात् २ अहमेवासमेवाग्रे
नान्यद्यत्सदसत्परं पश्चादहं यदेतच्च योवशिष्येतसोस्म्यहं ३ ऋते
र्थंयत्प्रतीयेत नप्रतीयेतचात्मनि तद्विद्यादात्मनोमायां यथाभासोय
थातमः ४ यथामहांतिभूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु प्रविष्टान्यप्रविष्टा
नि तथातेषुनतेष्वहं ५ एतावदेवजिज्ञास्यंतत्त्वजिज्ञासुनात्मनः अन्व
यव्यतिरेकाभ्यां यत्स्यात्सर्वत्रसर्वदा ६ एतन्मतंसमातिष्ठ परमेणसम।

धेना । मदान्क लाविकल्पेषु नरो मुह्यति करहिं चित् ७ श्री शुकोवाच
से पुरं देवैव मजनो जनानां परमे स्थिनं पश्यतस्तस्य तद्रूप मात्म
नो प्रकृता कृतिः ८ एतत्स्तोत्रं पठेन्नित्यं श्लोकं भागवतोक्तं चेत् ।
अष्टादश पुराणानां पठनात्लभते फलं ९ इति श्री चतुः श्लोकी ॥
यज्ञेन परिसंस्थाने च स्थितिः सद्भिरिति चोच्यते कर्म चैव तदर्थीयं सदित्ये
वाभिधीयते २७ अर्थः यज्ञादिषु च या स्थितिः । तात्पर्येण वस्थानं
तदपि सदित्युच्यते । यस्य चेदं नाम त्रयं सर्वं च परमा र्थः फलं य
स्य तत्तदर्थं कर्म पूजोपहार गृहारामपरिमार्जनोपलेपरङ्गमाल
कादिरूपं क्रियते तत्सिद्ध्ये यदन्यत्कर्म क्रियते उद्यान शालेहत्र धनार्ज
नादिविषयं तत्कर्म तदर्थीयं । तच्चापि व्यवहितमपि सदित्येवाभिधी
यते । यस्मादेवमतिप्रशस्तमेतन्नाम त्रयं तस्मादेतत्सर्वकर्मसा
गुण्यार्थं कीर्तयेदिति तात्पर्यार्थः । अत्र चार्थवादानुपपत्त्या विधिः
कल्प्यते विधेयं स्तूयते वस्त्विति न्यायात् अपरे तु प्रवृत्तिर्विधानात्
क्रियते मोह कोटिभिः स्तुत्यादिवर्त्मानो परेऽत्राः समेधो यजतीत्यादिव
द्विधितयापरिमेनाय स्त्यादुः । ननु सद्भावे साधु भावे चेत्यादिषु प्राप्त्या

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः । यज्ञदानतपःकर्म न त्या-
ज्यमिति चापरे ३ दोषवत् हिंसादिदोषवत्त्वेन बंधकरमिति हेतोः सर्व-
मपि कर्म त्याज्यमित्येके सांख्याः प्राहुः कर्म प्राहुर्मनीषिण इत्यस्या-
यं भावः न हिंस्यात्सर्वभूतानि इत्ते निषेधः । पुरुषस्यानर्थहेतुर्हिं-
सेत्याह अग्नीषोमीयं पशुमालभेत इत्यादिः प्राकरणिको विधि-
स्तु हिंसायाः क्रतूपकारकत्वमाह । अतो भिन्नविषयत्वेन सामान्य-
विशेषन्यायागोचरत्वात् बाधबाधकता न संभवति अतोऽध्वा-
साधिपसर्वेष्वपि कर्मसु हिंसादेः संभवात् सर्वमपि त्याज्यमेवेति कर्मे
तेऽउक्तं दृष्टवदानुश्रविकः स ह्यविशुद्धिक्षयातिशययुक्त इति अपरे
तु मीमांसकाः यज्ञादिकं कर्म न त्याज्यमिति प्राहुः । अयं भावः क्र-
त्वर्थापि सती हिंसा पुरुषेणैव कर्तव्या । सा चान्योद्देशेनापि कृता पु-
प्रत्यवायहेतुरेवेति यावद्धि विधिर्विधेयस्य तदुद्देशेनानुष्ठानं विधत्ते
तोऽस्य फलहेतुत्वाच्च बधस्यानर्थत्वे निषेधस्य तात्पर्यमपहरतो प्रा-
प्तिमात्रापेक्षत्वात् अन्यथा अज्ञानप्रमादादिकृते दोषाभावप्रसंगात्
तदेवं समानविषयत्वेन समानन्यायस्य विरोधे न बधान्नातिदो-
षत्वा अतो नित्यं यज्ञादिकर्म न त्याज्यमित्यर्थः एवं मतभेदमुपन्य-
स्य स्वमतं कथयितुमाह ४

दोषत्वके क्या कर्म के देवता र्थतहराते

श्रीरामायनमः निधायहृदिविश्वेशं विधायगुरुवंदनं बा
लानांसुखबोधायक्रियतेतर्कसंग्रहः१ द्रव्यगुणकर्मसा
मान्यविशेषसमवायाभावाःसप्तपदार्थाः तत्रद्रव्याणि
पृथ्व्यप्तेजोवाय्वाकाशकालदिगात्ममनांसिनवैवरूप
रसगंधस्पर्शसंख्यापरिमाणपृथक्त्वसंयोगविभाग
परत्वापरत्वगुरुत्वद्रवत्वस्नेहशब्दबुद्धिसुखदुःखेच्छाद्वेष
प्रयत्नधर्माधर्मसंस्काराश्चतुर्विंशतिर्गुणाः उत्क्षेपणापक्षे
पणाकुंचनप्रसारणगमनानिपंचैवकर्माणि परमपरंचे
तिद्विविधंसामान्यं नित्यद्रव्यवृत्तयोविशेषास्त्वनंताएव समवा
यस्त्वेकएव अभावश्चतुर्विधः प्रागभावःप्रध्वंसाभावोऽत्यंता
भावोन्योन्याभावश्चेति गंधवतीपृथ्वी साद्विधानित्यानित्या
च नित्यापरमाणुरूपा अनित्याकार्यरूपा पुनस्त्रिधा शरी
रेंद्रियविषयभेदात् शरीरमस्मदादीनां इंद्रियंगंधग्राहकंघ्रा

तेक्रियतेप्रतिपाद्यते पदार्थाः अनेन

संबंध

णंनासाग्रवर्त्ति विषयोमृत्पाषाणादिः शीतस्पर्शवत्यापःता
द्विधाःनित्याअनित्याश्च नित्यापरमाणुरूपा अनित्याकार्यरूपाः
पुनस्त्रिविधाः शरीरेंद्रियविषयभेदात् शरीरंवरुणलोके
इंद्रियंरसग्राहकंरसनंजिह्वाग्रवर्त्ति विषयःसरित्समुद्रादिः
उष्णस्पर्शवत्तेजः तच्चद्विविधंनित्यमनित्यंच नित्यंपरमाणुरू
पंअनित्यंकार्यरूपंपुनस्त्रिविधंशरीरेंद्रियविषयभेदात् श
रीरमादित्यलोके इंद्रियंरूपग्राहकंचक्षुः कृष्णताराग्रवर्त्ति
विषयश्चतुर्विधः भौमदिव्यौदर्याकरजभेदात् भौमंवह्न्यादि
कं अबिंधनंदिव्यंविद्युदादि भुक्तस्यपरिणामहेतुरौदर्यंआ
करजंसुवर्णादि रूपरहितःस्पर्शवान्वायुः सद्विधःनित्योनि
त्यश्च नित्यःपरमाणुरूपो अनित्यःकार्यरूपः पुनस्त्रिविधः
शरीरेंद्रियविषयभेदात् शरीरंवायुलोके इंद्रियंस्पर्शग्रा
हकंत्वक् सर्वशरीरवर्त्ति विषयोवृक्षादिकंपनहेतुः शरीरां

न्तःसंचारीवायुःप्राणःसचएकोप्युपाधिभेदात्प्राणापा
नादिसंज्ञांलभते शब्दगुणमाकाशं तच्चैकंविभुनित्यंच अ
तीतादिव्यवहारहेतुःकालःसचैकोविभुर्नित्यश्च प्राच्यादि
व्यवहारहेतुर्दिक् साचैकानित्याविभ्वीच ज्ञानाधिकरण
मात्मासद्विधःपरमात्माजीवश्च तत्रेश्वरःसर्वज्ञःपरमात्मा
एकएव जीवःप्रतिशरीरंभिन्नोविभुर्नित्यश्च सुखाद्युपल
ब्धिसाधनमिंद्रियंमनः तच्चप्रत्यात्मनियतत्वादनंतंपरमाणुरू
पंनित्यंच चक्षुर्मात्रग्राह्योगुणोरूपं तच्चशुक्लनीलपीतरक्त
हरितकपिशचित्रभेदात्सप्तविधं पृथिवीजलतेजोवृत्ति
तत्रपृथिव्यांसप्तविधं अ भास्वरंशुक्लंजले शुक्लंभास्वरं
तेजसि रसनाग्राह्योगुणोरसः सचमधुराम्ललवणकटु
तिक्तकषायभेदात्षड्विधः पृथिवीजलवृत्तिः पृथिव्यांष
ड्विधः जलेमधुरएव घ्राणग्राह्योगुणोगंधः सचद्विधः सु
रभिरसुरभिश्च पृथिवीमात्रवृत्तिः त्वगिंद्रियमात्रग्राह्यो

ता: स्पर्शः स च त्रिविधः शीतोष्णानुष्णाशीतभेदात् पृथ्वि
व्यप्तेजोवायुवृत्तिः तत्र शीतो जले उष्णस्तेजसि अनुष्णाशी
तः पृथ्वीवाय्वोः रूपादिचतुष्टयं पृथिव्यां पाकजमनित्यं
च अन्यत्रापाकजं नित्यमनित्यं च नित्यगतं नित्यं अनित्यग
तमनित्यं एकत्वादिव्यवहारहेतुः संख्या नवद्रव्यवृत्तिः
एकत्वादिपरार्धपर्यन्ता एकत्वं नित्यमनित्यं च नित्यगतं नि
त्यं अनित्यगतमनित्यं द्वित्वादिकं तु सर्वत्राप्यनित्यमेव मा
नव्यवहारासाधारणं कारणं परिमाणं नवद्रव्यवृत्ति त
च्चतुर्विधं अणुमहद्दीर्घह्रस्वं चेति पृथग्व्यवहारासाधा
रणं कारणं पृथक्त्वं सर्वद्रव्यवृत्ति संयुक्तव्यवहारहेतुः
संयोगः सर्वद्रव्यवृत्तिः संयोगनाशको गुणो विभागः स
र्वद्रव्यवृत्तिः परापरव्यवहारासाधारणे कारणे परत्वा
परत्वे पृथिव्यादिचतुष्टयमनोवृत्ती ते द्विविधे दिक्कृते का
लकृते चेति दूरस्थे दिक्कृतं परत्वं समीपस्थे दिक्कृतमप

…रत्वं ज्येष्ठे कालकृतं परत्वं कनिष्ठे कालकृतमपरत्वं आद्य
पतनासमवायिकारणं गुरुत्वं पृथिवीजलवृत्ति स्यंदना
समवायिकारणं द्रवत्वं पृथिव्यप्तेजोवृत्ति तद्द्विधं सांसिद्धि
कं नैमित्तिकं च सांसिद्धिकं जले नैमित्तिकं पृथिवीतेजसो
: पृथिव्यां घृतादावग्निसंयोगजं द्रवत्वं तेजसि सुवर्णा
दौ च चूर्णादिपिंडीभावव्यवहारहेतुर्गुणः स्नेहः जलमात्र
वृत्तिः श्रोत्रग्राह्यो गुणः शब्दः आकाशमात्रवृत्तिः स द्वि
धः ध्वन्यात्मको वर्णात्मकश्चेति ध्वन्यात्मको भेर्यादौ
वर्णात्मकः संस्कृतभाषारूपः सर्वव्यवहारहेतुर्गुणो
बुद्धिः सा द्विधा स्मृतिरनुभवश्च संस्कारमात्रजन्यं
ज्ञानं स्मृतिः तद्भिन्नं ज्ञानमनुभवः स द्विधः यथार्थो
ऽयथार्थश्च तद्वति तत्प्रकारकोनुभवो यथार्थः सैव प्र
मेत्युच्यते तदभाववति तत्प्रकारकोनुभवोऽयथार्थः य

ये

त्युपमि १

१३१ थार्थानुभवचतुर्विधः प्रत्यक्षानुमितिशाब्दभेदात् तत्का
115 रणमपि चतुर्विधं प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दभेदात् व्या
पारवत् असाधारणं कारणं करणं अनन्यथासिद्धि
॥ कार्यनियतपूर्ववृत्ति कारणं कार्यं प्रागभावप्रतियोगि
॥ कारणं त्रिविधं समवाय्यसमवायिनिमित्तभेदात्
यत्समवेतं कार्यमुत्पद्यते तत्समवायिकारणं यथा तं
तवः पटस्य पट स्वगतरूपादेः कार्येण कारणेन च
सहैकस्मिन्नर्थे समवेतत्वे सति यत्कारणं तदसमवायि
कारणं यथा तन्तुसंयोगः पटस्य तन्तुरूपं पटरूपस्य त
दुभयभिन्नं कारणं निमित्तकारणं यथा तुरीवेमादिकं
पटस्य एतत्त्रिविधकारणमध्ये यदसाधारणं कारणं
तदेव करणं तत्र प्रत्यक्षज्ञानकरणं प्रत्यक्षं इन्द्रियार्थ
सन्निकर्षजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षं तद्द्विविधं निर्विकल्पकं

सविकल्पकं च तत्र निष्प्रकारकं ज्ञानं निर्विकल्पकं यथा
किंचिदिदमिति सप्रकारकं सविकल्पकं यथा डित्थोयं ब्राह्मणोयं
श्यामोयं पाचकोयमिति प्रत्यक्षज्ञानहेतुरिंद्रियार्थसन्निकर्षः स च
षड्विधः संयोगः संयुक्तसमवायः संयुक्तसमवेतसम
वायः समवायः समवेतसमवायो विशेषणविशेष्यभा
वश्चेति चक्षुषा घटप्रत्यक्षजनने संयोगः सन्निकर्षः ॥
घटरूपप्रत्यक्षे संयुक्तसमवायः चक्षुसंयुक्ते घटे रूप
स्य समवायात् रूपत्वसामान्यप्रत्यक्षे संयुक्तसमवेत
समवायः चक्षुसंयुक्ते घटे रूपं समवेतं तत्र रूपत्वस्य स
मवायात् श्रोत्रेण शब्दसाक्षात्कारे समवायः सन्निक
र्षः कर्णविवरवर्त्याकाशस्य श्रोत्रत्वात् शब्दस्याकाश
गुणत्वात् गुणगुणिनोः समवायात् शब्दत्वसाक्षात्का
रे समवेतसमवायः सन्निकर्षः श्रोत्रसमवेतशब्दे श

116

इत्व समवायात् अभावप्रत्यक्षे विशेषणविशेष्यभावः
सन्निकर्षः घटाभाववद्भूतलमित्यत्र चक्षुःसंयुक्ते भूत
ले घटाभावस्य विशेषणत्वात् एवं सन्निकर्षषट्कजन्यं ज्ञा
नं साक्षात्कारः तत्करणमिंद्रियं तस्मादिंद्रियं प्रत्यक्ष
प्रमाणमिति सिद्धं अनुमितिकरणमनुमानं परा
मर्शजन्यं ज्ञानमनुमितिः व्याप्तिविशिष्टपक्षधर्मताज्ञा
नं परामर्शः यथा वह्निव्याप्यधूमवानयं पर्वत इति तत्
ज्जन्यं पर्वतो वह्निमानिति ज्ञानमनुमितिः यत्र धूमस्त
त्राग्निरिति साहचर्यनियमो व्याप्तिः व्याप्यस्य पर्वतादि
वृत्तित्वं पक्षधर्मता अनुमानं द्विविधं स्वार्थं परार्थं च
स्वार्थं स्वानुमितिहेतुः तथा हि स्वयमेव भूयो दर्शने
न यत्र धूमस्तत्राग्निरिति महानसादौ व्याप्तिं गृहीत्वा
वा पर्वतसमीपं गतस्तद्गते चाग्नौ संदिहानः पर्व

तेधूमंपश्यन्व्याप्तिंस्मरति यत्रधूमस्तत्राग्निरिति तदनं
तरं वह्निव्याप्यधूमवानयंपर्वतइतिज्ञानमुत्पद्यते
ऽयमेवलिंगपरामर्शइत्युच्यते तस्मात्पर्वतोवह्निमा
निति ज्ञानमनुमितिरुत्पद्यते तदेतत्स्वार्थानुमानं
।।यत्तुस्वयंधूमादग्निमनुमायपरप्रतीत्यर्थं पंचा
वयववाक्यंप्रयुज्यतेतत्परार्थानुमानम् यथापर्व
तोऽग्निमान् धूमवत्वात् योयोधूमवान्ससोऽग्निमान्य
था महानसस्तथाचायं तस्मात्तथेति अनेनप्रतिपा
दितात्लिंगात्परोप्यग्निंप्रतिपद्यते तदेवपरार्थानुमा
नम् प्रतिज्ञाहेतुउदाहरणोपनयनिगमनानिपंचाव
यवाः पर्वतोऽग्निमानितिप्रतिज्ञा धूमवत्वादितिहेतुः
योयोधूमवान्ससोऽग्निमान्यथामहानसइत्युदाह

१३३ तं तथा चायमित्युपनयः तस्मात्तथेति निगमनं स्वा
117 र्थानुमितिः परार्थानुमितिर्वा लिंगपरामर्श एव करणं
तस्माल्लिंगपरामर्शोनुमानं लिंगं त्रिविधं अन्व
यव्यतिरेकि केवलान्वयि केवलव्यतिरेकि चेति अ
न्वयेन व्यतिरेकेण च यस्य व्याप्तिर्गृहीता अन्वय
व्यतिरेकि यथा वह्नौ साध्ये धूमवत्वं यत्र धूमस्त
त्राग्निरित्यन्वयव्याप्तिः यत्र वह्निर्नास्ति तत्र धू
मो नास्ति यथा ह्रद इति व्यतिरेकव्याप्तिः अन्वय
मात्रव्याप्तिकं केवलान्वयि यथा घटोऽभिधेयः प्र
मेयत्वात्पटवदिति अत्र प्रमेयत्वाभिधेयत्वयो
र्व्यतिरेकव्याप्तिर्नास्ति सर्वस्य प्रमेयत्वाभिधे
यत्वाच्च व्यतिरेकमात्रव्याप्तिकं केवलव्यतिरेकि

स्वे यथा पर्वत इतरेभ्यो भिद्यते गंधवत्वात् यदितरेभ्यो न भिद्यते न तद् गंधवद्यथा जलं न चैयं तथा तस्मान्न तथेति व्य
तिरेकं धवत्र इतरभेत्रभेत्यन्वय उदाहरणतो नास्ति प
क्षवीमात्रस्य पक्षत्वात् संदिग्ध साध्यवान् पक्षः
यथा धूमवत्वहेतौ पर्वतः निश्चित साध्यवान् सपक्षः
यथा तत्रैव महानसः निश्चित साध्याभाववान् विप
क्षः यथा तत्रैव हृदः सव्यभिचार विरुद्ध सत्प्र
तिपक्षासिद्ध बाधिताः पंच हेत्वाभासः सव्यभि
चारोनैकांतिकः सत्रिविधः साधारणासाधार
णानुपसंहारि भेदात् तत्र साध्याभाववद्वृत्तिः
साधारणोनैकांतिकः यथा पर्वतोग्निमान् प्रमे
यत्वादिति प्रमेयत्वस्य वह्न्यभाववति हृदेपि वर्तमा

१३५

118

नत्वात् सर्वसपक्षविपक्षव्यावृत्तो ऽसाधारणः य
था शब्दो नित्यः शब्दत्वादिति शब्दत्वं सर्वेभ्यो
नित्येभ्यो ऽनित्येभ्यो व्यावृत्तं शब्दमात्रवृत्ति अन्वय
व्यतिरेकदृष्टांतरहितो ऽनुपसंहारी यथा सर्वम
नित्यं प्रमेयत्वात् इति सर्वस्यापि पक्षत्वाद् दृष्टांतो
नास्ति साध्याभावव्याप्तो हेतुर्विरुद्धः यथा शब्दो
नित्यः कृतकत्वादिति कृतकत्वं हि नित्यत्वाभावे
नानित्यत्वेन व्याप्तं साध्याभावसाधकं हेत्वंतरं य
स्य स सत्प्रतिपक्षः यथा शब्दो नित्यः श्रावणत्वा
त् शब्दत्ववत् शब्दो ऽनित्यः कार्यत्वात् घटवदिति
असिद्धस्त्रिविधः आश्रयासिद्धः स्वरूपासिद्धो
व्याप्यत्वासिद्धश्चेति आश्रयासिद्धो यथा गगनार

रविंदं सुरभ्यरविंदत्वात्सरोजारविंदवदिति अत्र गगना
नारविंदमाश्रयः स च नास्त्येव स्वरूपासिद्धो यथा
शब्दो गुणश्चाक्षुत्वादिति अत्र चाक्षुषत्वं शब्दे नास्ति
शब्दस्य श्रावणत्वात् सोपाधिको व्याप्यत्वासिद्धः
साध्यव्यापकत्वे सति साधनाव्यापकत्वमुपाधिः सा
ध्यसमानाधिकरणात्यंताभावाप्रतियोगित्वं साध्य
व्यापकत्वं साधनवन्निष्ठात्यंताभावप्रतियोगित्वं
साधनाव्यापकत्वं पर्वतो धूमवान् वह्निमत्वादित्यत्रा
र्द्रेंधनसंयोग उपाधिः यत्र धूमस्तत्रार्द्रेंधनसंयोग इति
साध्यव्यापकत्वं यत्र वह्निः तत्रार्द्रेंधनसंयोगो नास्ति अ
योगोलके आर्द्रेंधनाभावात् एवं च साध्यव्यापकत्वे स
ति साधनाव्यापकत्वादार्द्रेंधनसंयोग उपाधिः सोपाधि
कत्वाद्वह्निमत्वं व्याप्यत्वासिद्धं यस्य साध्याभावः प्रमा
णांतरेण निश्चितः स बाधितः यथा वह्निर्हिमद्रव्यत्वादिति अ
नु

१३५

119

त्रानुष्णत्वं साध्यं तदभावः उष्णत्वं स्पर्शनप्रत्यक्षेण गृह्यत इति
बाधितत्वं व्याख्यातमनुमानं उपमितिकरणमुपमानं संज्ञा
संज्ञिसंबंधज्ञानमुपमितिः तत्करणं सादृश्यज्ञानं तथा हि
कश्चिद् गवयशब्दार्थमजानन् कुतश्चिदारण्यकपुरुषाद् गोस
दृशो गवय इति श्रुत्वा वनं गतो वाक्यार्थं स्मरन् गोसदृशं पिंड
पश्यति तदनंतरमयं गवयपदस्ते गवयशब्दवाच्योयमित्युपमि
तिरुत्पद्यते आप्तवाक्यं शब्दः आप्तस्तु यथार्थवक्ता वाक्यं पदस
मूहः यथा गामानयेति शक्तं पदं अस्मात्पदादयम
र्थो बोद्धव्य इतीश्वरसंकेतः शक्तिः आकांक्षा योग्यता स
न्निधिश्च वाक्यार्थज्ञाने हेतुः पदस्य पदांतरव्यतिरेकप्रयुक्ता
न्वयाननुभावकत्वमाकांक्षा अर्थाबाधो योग्यता पदानामवि
लंबेनोच्चारणं सन्निधिः आकांक्षादिरहितं वाक्यमप्रमाणं य
था गौरश्वः पुरुषो हस्तीति न प्रमाणं आकांक्षाविरहात् अग्निना
सिंचेदिति न प्रमाणं योग्यताविरहात् प्रहरे प्रहरे सहोच्चारि
तानि गामानयेत्यादिपदानि न प्रमाणं सान्निध्याभावात् वा

क्यं द्विविधं वैदिकं लौकिकं च वैदिकमीश्वरोक्तत्वात्सर्वमेव प्रमा
णं लौकिकं चाप्तोक्तं प्रमाणमन्यदप्रमाणं वाक्यार्थज्ञानं परा
र्थज्ञानं कारणं तत्करणं शब्दः यथार्थानुभवो निरूपितः अ
यथार्थानुभवस्त्रिविधः संशयविपर्ययतर्कभेदात् एकस्मि
न्धर्मिणि विरुद्धनानाधर्मवैशिष्ट्यावगाहि ज्ञानं संशयः यथा स्था
णुर्वा पुरुषो वेति मिथ्याज्ञानं विपर्ययः यथा शुक्ताविदं रजत
मिति व्याप्यारोपेण व्यापकारोपस्तर्कः यथा यदि वह्निर्न स्यात्त
र्हि धूमोऽपि न स्यादिति स्मृतिरपि यथार्था अयथार्था च प्रमाजन्या य
थार्था अप्रमाजन्या अयथार्था सर्वेषामनुकूलवेदनीयं सुखं प्र
तिकूलवेदनीयं दुःखं इच्छा कामः क्रोधो द्वेषः कृतिः प्रयत्नः वि
हितकर्मजन्यो धर्मः निषिद्धकर्मजन्यस्त्वधर्मः बुद्ध्यादयोऽष्टा
वात्ममात्रविशेषगुणाः बुद्धीच्छाप्रयत्नाः नित्या अनित्याश्च
नित्या ईश्वरस्य अनित्या जीवस्य संस्कारस्त्रिविधः वेगो भाव
ना स्थितिस्थापकश्चेति वेगः पृथिव्यादिचतुष्टयमनोवृत्तिः
अनुभवजन्या स्मृतिहेतुर्भावना आत्ममात्रवृत्तिः अन्यथाकृत

स्य पुनस्तद्वस्थापकस्थितिस्थापकः कटादिपृथ्वीवृत्तिः॥ चल
नात्मकं कर्म ऊर्ध्वदेशसंयोगहेतुरुत्क्षेपणं अधोदेशसंयोगहे
तुरपक्षेपणं शरीरसंनिकृष्टसंयोगहेतुराकुंचनं विप्रकृष्टसं
योगहेतुः प्रसारणं अन्यत्सर्वं गमनं पृथ्व्यादिचतुष्टयमनोमा
त्रवृत्तिः कर्म नित्यमेकमनेकानुगतं सामान्यं परमपरं च द्रव्य
गुणकर्मवृत्ति परं सत्ता अपरं द्रव्यत्वादि नित्यद्रव्यवृत्तयो व्यावर्त्त
का विशेषः नित्यसंबंधः समवायः अयुतसिद्धवृत्तिः ययोर्मध्ये
एकमपराश्रितमेवावतिष्ठते तावयुतसिद्धाविति यथावयवा
वयविनौ गुणगुणिनौ क्रियाक्रियावन्तौ जातिव्यक्ती विशेषनि
नं त्यद्रव्ये चेति अनादिः सांतः प्रागभावः उत्पत्तेः पूर्वं कार्यस्य सादिर
नंतः प्रध्वंसः उत्पत्त्यनंतरं कार्यस्य त्रैकालिकसंसर्गावच्छिन्नप्रतियो
गिताकोऽत्यंताभावः यथा भूतले घटो नास्तीति तादात्म्यसंबंधावच्छि
न्नप्रतियोगिकोऽन्योन्याभावः यथा घटः पटो न भवतीति सर्वेषाम
पि पदार्थानां यथायथमुक्तेष्वंतर्भावात्सप्तैव पदार्थाः इति सिद्धं का
णादन्यायमतयोर्बालव्युत्पत्तिसिद्धये अन्नंभट्टेन विदुषा रचितस्त
र्कसंग्रहः इति तर्कसंग्रहः समाप्तः श्रीशिवाय नमः श्रीरामचंद्राय नमः

ॐ स्तोष्ये भक्त्या विष्णुमनादिं जगदादिं यस्मि
न्नेतत्संसृतिचक्रं भ्रमतीत्थं यस्मिन्दृष्टे नश्यति इसप्रकार
तत्संसृतिचक्रं तं संसारध्वांतविनाशं हरिमी क्याकर्त्ताकि संक्षिप्तकर
डे १ यस्यैकांशादित्थमशेषं जगदेतत्प्रादु वालानारि रूपकर
र्भूतं येन पिनद्धं पुनरित्थं येन व्याप्तं येन वि
बुद्धं सुखदुःखैः तं २ सर्वज्ञो यो यश्चहि सर्वः
सकलो यो यश्चानंदोनंतगुणो यो गुणधा
मा यश्चाव्यक्तो व्यस्तसमस्तः सदसद्यस्तं
डे यस्मादन्यन्नास्त्यपि नैवं परमार्थं दृश्यादन्यो

= व्यवहारसिद्धपदार्थ
जिससे नहीं भि
न्न

त्वद्विषयं ज्ञानमयत्वात् सोऽतः ज्ञानज्ञेयत्वेही
नाऽपि सदृशाज्ञ स्तं ४ आचार्य्यभ्यो लब्धा सुस्
स्माचुतत्वा वैराग्येणाभ्यासबलाद्धैव
हृदीक्षा भक्तौ एकाग्न्य ध्यानपरायां विदुरी
त्वं तं ५ प्राणानायम्योऽस्मि तिरश्चैतं हृद्देरुधा
नान्यत्समत्वात्तस्तुन रत्रैव रवेलापा द्वारोस्वि
तेभ्योर्हरश्चीरस्मीति विदुर्यं तं ६ येब्रह्मारव्यं
देवमनन्तं परं पूर्णं हृत्स्थं भक्तैर्लभ्यमजं
सूक्ष्ममनन्तं ध्यात्वात्म स्थं ब्रह्मस्वरूपं विदु

रूपं तं ७ मात्रातीतं स्वात्मरूपैकाग्रात्मरूपबोधं।
ज्ञेयातीतं ज्ञानमयं हृद्युपलभ्यं भावग्राह्यं।
नंदमनन्यं चरूपं तुर्यं तं ८ यदच्छेद्यं वस्तुसतत्व
रविषयारवं नतत्रद्वैतं त्रिरूपे स्थिचालरहं च॥ध्या
यं त्वेवं यं सनकाद्यास्तु न योज्यं तं ९ यद्बोधे यं तत्र
रहं नेत्तिरूपेहाय स्वात्मज्योतिर्ज्ञानमयानंदरूप
९. वाप्य तस्मिन्नस्मीत्यात्मरूपेरोयं रवैदुरीयं तं
१० रहिताचारहिताद्रूपमशेषं सर्वविकल्पं मत्वारह्णि
ह्रमादर्शि मात्रं गगनाभं त्यक्त्वा देहं यं प्रविशं

१२८

122

न्यचुतमक्तास्तंसं ११ सर्वत्रास्ते सर्वशरीरी न च
सर्वः सर्वं वेत्ति वेद्यं नेह यं वेत्ति सर्वः सर्वज्ञं तर्या
मित्ति येत्यं यमनन्यास्तं १२ सर्वं दृष्ट्वा स्वात्मनेवु
क्ताजगदेतं दृष्ट्वात्मानं चैवमजं सर्वजनेषु स
र्वात्मैकोस्मीति रविं दुर्यं जिनहत्स्थं तं १३ सर्व
त्रैकः पश्यति जिघ्रति भुंक्ते स्पृशति श्रोता बु
ध्यति चेत्ताहुरिमं यं साक्षी चास्ते कर्तृषु पश्यति
ति चान्ये तं १४ पश्यन्शृण्वन्नत्र विजानन्रज
घ्रन्भुंजन्देहस्मेमं जीवन्तं येत्यं इत्यात्मानं यं रविंदु

स्वात्मप्रबोध

रीशं रविबयन्तं नं १४ जाग्रद्द्रष्टा स्थूलपदार्थान
थमायां दृष्टा स्वप्नेप्यर्थे सुषुप्तौ सुखघनेड्यं इत्या
त्मानं वीक्ष्य मुदास्ते चतुरीयं नं १६ पञ्चवक्त्रो
यहृदय एको गुणभेदान्नानाकारान्स्फाटिकव
ज्जातिर्विचित्रः स्पष्टः स्पष्टप्रायमजः कर्मफ
लैर्यस्तं १७ ब्रह्मा विष्णुरुद्रो नाग्नौ रविचंद्र॥
स्त्वेंद्रो वायुर्यज्ञ इत्यपि परिकल्प्या एकं संतं यं
बहुधा कल्पयंति भेदान्तं १८ सत्यं ज्ञानं सुखमनंतं
व्यतिरिक्तं त्वांतं गूहं स्वं निष्कलमानेर मननं इ

१३५
123

स्याहशोयंवक्तासौभाग्येजंतं १९ कोशानेता
न्यंचरस्याहीनः स्नेहाय अस्मास्मीतिस्वात्मरन्तिरने
ष्वित्याइष्ठिस्थः शिवार्हिश्रोवेदभगुयंयजुरंते
तं २० येनाखेशोयस्यचक्षुशक्त्यायाद्धीनः हेग
शोयंकारियताजंतुषुकर्तुः कर्तामोक्तात्मात्र
हिरश्चित्स्वपथाधिरूढः तं २१ सष्टासर्वस्वात्मत
येवेस्यमत्तर्क्यं व्याख्यार्थंतिकत्सम्येदंस एम
षं सत्यत्वचाभूतपरमात्मासर्व एकस्तं २२
वेदांतप्राध्यात्मकशास्त्रेषुपुराणेः शास्त्रे

श्रात्वेः सातत्वतत्त्रैपत्र यमीत्रां २ ष्टाप्यांतपेश्च
तस्सिबुध्धारवेरवित्सुर्यंत्तं २२ स्वश्राममस्त्तिध्यान
समाधैयतिमानै स्तानुत्राकोरे वद्धैवाप्तुय
ईत्रा: उवित्तियोजेन्मत्रुत्तेपत्रारपेरवेनातैस्तं २
पे यस्यातकंस्वात्मरवेभूत्तेः परमार्थं सर्वरव
रल्वेत्यत्र तिरुक्तं प्रुत्तेवाङ्गिः तेजारेत्वाहरष्टि लेसत्रजते जन्मारद्वैत सद्देत्रा२ नैं
तरंगाभमरमेत्रं तं रपदृष्टुगीतास्वहरतत्वे
रवेरधिनाजे भक्त्याग्व्यालिभ्यस्हदेस्थांहृस्त्रीमा
विउर्यंतं २६
त्रं ध्यात्वातरसोत्रसमहरमेत्यत्र
तेरद्विधिपूर्ण २ =श्रहंश्रस्मि १

१४०

124

हे त्रसत्वं प्राप्य विभुः पंचमुखैर्वर्णभुंकेजस्संभो
गपपराधान्प्रकारतेस्य: हे त्रै हैं त्रैर्पक्वंहुवदेको
बहुधास्तेतं २७ युक्तालोहन व्यासवचोस्य
त्रेहेलम्य: हे त्र हे त्र मातरवडि पुरुषाख्य:
योहं सो सो सो स्यहमेव स्तोर्वेदुयंति २८ एकी
कत्यानेकशरीरस्यरमेमंत्रं परंवेत्तायेहैव
सएवाप्नुभवंति यस्मिंलीनानेह पुनर्जन्म
लभंते तं २९ द्वे द्वैकत्वंयच्चमधुमालतावाक्यैः
कत्वानारांकोपासनमासाद्यवेभूत्वा योसो

सोहं सोस्म्यहमेवेत्तिरविदुर्यतं ३० योयंदेहे चेष्टयेता
तः करणास्थः सूर्यं चासौताप्यरयेत्तासोस्म्यहमेव॥
इत्यात्मैक्योपासनयायं विदुरीश्वरं तं ३१ विज्ञानांश्रो
घस्यसत्तः श्राकाशधिरूहो बुद्धिर्बुध्यत्यत्र वरहे बोध्यप
दार्थान् नैवांतस्थं बुध्यत्ति यंबोधरयेतारंतं ३२ कोयं
देहे देव इत्यास्यं सुरवेचार्यमोता प्रोतानंद यताच्चेष
रहेदेव इत्यालोच्यज्ञाना इहास्मीरत्तिरविदुर्यं तं ३३ को
ह्येवान्याशात्मरनेन स्यादयमेव ह्येनानंदः प्राणरिति
चापानेत्तिचेरते इत्यस्तित्वं वस्तुपपत्याश्रुत्तिरवा तं
३४ प्राणो वाहं वाकू प्रवता हीरनेमनोवा बुद्धिर्वाहं
व्यस्तउता होथापि समस्तः इत्यालोच्यज्ञ रवे इहास्मी

स्तेरवेदुर्यंतं २५ नाहंप्राणोनैवशरीरंनमनोहं बुद्धि
र्नाहंनाहमहंकारधियौच योत्रज्ञांशः सोस्म्यहमेवे
स्तेरवेदुर्यंतं २६ सत्तामात्रंकेवलविज्ञानमजंसत्सू
क्ष्मं नेत्यं तत्त्वमसीत्यात्मसुताय साम्नामंतेप्राहपि
तायंरवेभूमा यंतं २७ मूर्तामूर्तेपूर्वमपोहायसमा
धौ दृश्यंसर्वंनेतिचनेतीतिविहाय चैतन्यांशोस्वा
त्मनिसंतंचरवेदुर्यंतं २८ ओतंप्रोतंयत्रचसर्वंग
गनांतं योस्थूलानण्वादिषुसिद्धोहरसंज्ञःसो
तात्तोन्योनेत्युपलभ्योनचवेद्यस्तं २९ यावत्सर्वं
सत्यमिवाभातीयदेतत् यावत्सोस्मीत्यात्मनियो
ज्ञोनहिदृष्टः दृष्टेतस्मिन्सर्वमसत्यंभवतीदंतं

५०॥ रागाद्युक्तं त्वेहयुक्तं हे मयवशानो येनाष्टांगैकज्वाले
त ज्ञानमयाग्नौ दग्ध्वात्मानं यं परिशिष्टं च विदुर्यं
तं ५१ यं विज्ञानजोतिषमाद्यं सुखिमांतं हृच्चक्रेंदु ८
न्याकसमीडन्तं तदुद्दामं भक्त्याराध्यो हे वरचेत्रात्मा
त्मरतेसंतं तं ५२ पायाज्ञ कं स्वात्मरतेसंतपुरुषं यो
भक्त्या स्तौतीत्यां गिरं सविधुररेमं मां इत्यात्मानं
स्वात्मरतेसेहत्य सदैकस्तं ५३ इत्यं स्तोत्रं भक्त
जनेडंतं भवतीति ध्यांताक्कमिं भगवत्पादीयरमेदं
यः स्वैक्यो लोकिं पठरते प्रतोत्ति अजरते सो ज्ञानं
ज्ञेयं चाप्नोति मनुष्यः ५५ इति श्रीमत्परमहंस
परिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचिता हरि
स्तुतिः समाप्तः ॐ
१८८१ मंगसिर १९

श्रीरामायनमः श्रीवसिष्ठ उवाच ब्रह्मन्ब्रह्मतत्परेनै
वेद हृदये निगुल्लिंगुणाद्वयः कथं चरंति प्रभुत्वयः साहात्से
दृसत्तः पर १ टी० पूर्वाध्यायांते एवं स्वभक्तयोराज
नूभगवान्भक्तभक्तिमान् उत्थित्वा दिव्यसंमार्गं वेदर्थ
पुनर्धारबलीममार्द्दित्वात्रसन्मार्गंसिंतोस्वतःप्रमा वेद
ताभूतानामप्रमात्यकारणारहितानांवेदानां
मार्गेच्छिन्नपरत्वमुपदिशन्नपभगवान्मार्दित्युक्तं
तत्रवेदानांब्रह्मपरत्वमुघटमानंमन्वानःपदी
रत्तौ॥ तत्रतावन्मुख्यालंहरणागुणमेदेनत्रिविधाश्र
रुप्रवर्त्तिः तत्रमुख्यापिरूढि योगभेदेनद्विधा
रूढिश्च स्वरूपेणजात्यागुणेनवानिर्दिशन्नाह

त्रिस

वस्तुनि संज्ञासंज्ञिसंकेतेन प्रवर्त्तते यथा डित्थः गौरित्युक्त
इति रूढिः लक्षणा च तेनैव संकेतेनाभिहितार्थसंबंधे
ति यथा गंगायां घोष इति गौणी चाभिहितार्थलक्षित
गुणायुक्ते तत्सदृशे यथा सिंहो देवदत्त इति यथा॥ अ
भिधेयाविनाभूत प्रवृत्तिर्लक्षणोच्यते लक्ष्यमाणगुणै
र्योगाद्वृत्तेरिष्टा तु गौणतेति १ योगवृत्तिस्तु एतत्त्रिवि
दूय धवृत्तिप्रतियारहितपदार्थयोः प्रकृतिप्रत्ययार्थयोर्यो र्वा
गेन यथा पंकजं अपगावः पाचक इत्यादि तत्र तावद्
स्यारतीरूढिवृत्तिर्न संभवतीत्याह साक्षात्कथंचन इं
त्वि इति न च हेतुः अग्नेरिन्द्ररूप इति अग्नेरिन्द्ररूपस्यापि हेतु
वदन्नुगुणावृत्तिं निराकरोति स्नेगुणो गुणावृत्तय इति
गुणो वृत्तिमिनाभ्रत्ये स्नेगुणो कथंचन इतीत्यर्थः स्नेगुणत्वे
रिपि हेतुं वदन्न लक्षणां योगं च निराकरोति सस्सतः परद

१४३

127

त्ते कार्यकारणाभ्यां परस्मिन्नसंयोकेन स्वैरसंबं
धाभावात् नलक्षणायोगावृत्ती संभवतः एवं परार्थ
त्वायोगात्परार्थस्यवाक्यार्थत्वायोगान्न प्रवृत्तिगो
चरत्वं लक्षणाइत्यभिप्रायः १ उत्तरमाह प्रीप्सुक उवा
च बुद्धीन्द्रियमनःप्राणान् जनानामसृजत्प्रभुः मा
त्रार्थं च भवार्थं च आत्मनेकल्पनाय च २ टी० बुद्धा
दीनुपाधीन् जनानामनुशयिनां जीवनां मात्रार्थं प्र
भुरीश्वरोऽसृजत् मीयंत इति मात्रा विषयाः तदर्थं
भवार्थं जन्म लक्षणां कर्मतत्प्रभवेति कर्मकरणार्थमित्य
र्थः आत्मने लोकांतरगामिने आत्मनस्तत्र लोकभोगा
येत्यर्थः कल्पनाय कल्पनानि वृत्तये मुक्तय इत्यर्थः
अर्थधर्मकाममोक्षार्थमिति क्रमेणापदचतुष्टयस्यार्थः

र्थे जन्मनैव जन्म जीवानामुच्यते न खलो घटनादित्याह
श्लो० न घटत उभयः प्रकृतिपुरुषयोरजयोरुभयपु
जाभवेत्प्रसुमतो जलबुद्बुदवत् ॥ त्वायेत इमे ततो थे
रवेधा नामनुतौः परमेश्वरेत इत्यातिमधुलेलेलु
रन्योषरसाः १८ नेश्वरकें प्रकृतेजीवरूपतोऽभवः स्या
त्पुरुषस्यवा उभयोर्वा आद्ये जीवानां जडत्वापत्तेः द्वि
तीये पुरुषस्याद्येकारित्वप्रसंगः अत एव नततीयइ
त्यावृत्येनोक्तं प्रकृतिपुरुषयोरुभवो न घटत इति
अनुत्पाजत्वप्रसंगे पादनादपीत्याह अज योरिति त
था च श्रुतिः अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीः
प्रजाजनयंतीं स्वरूपाः अजो ह्येकोजुषमाणोऽनु
शेते जहात्येनां भुक्तभोगा ॥ मजोन्य इति उभयथजा

रत्ते कार्यकारणाभ्यां परस्मिन्नसंगो केनचिदस्य संबं
धाभावात् न लक्षणया वृत्तीसंभवतः एवं परार्थ
त्वायोगात् परार्थस्य वाक्यार्थत्वायोगान्न प्रवृत्तिगो
चरत्वं ब्रह्मण इत्यभिप्रायः १ उत्तरमाह श्रीशुक उवा
च बुद्धीन्द्रियमनःप्राणान् जनानामसृजत्प्रभुः मा
त्रार्थं च भवार्थं च आत्मनेऽकल्पनाय च २ टी० बुध्या
दीनुपाधीन् जनानामनुशयिनां जीवनां मात्राद्यर्थं प्र
भुरीश्वरोऽसृजत् मीयंत इति मात्रा विषयाः तदर्थं
भवं जन्मलक्षणं कर्म तदर्थमिति कर्मकरणार्थमित्य
र्थः आत्मने लोकांतरगामिने आत्मनस्तत्तल्लोकभोगा
येत्यर्थः अकल्पनाय कल्पनानिवृत्तये मुक्तय इत्यर्थः
अर्थधर्मकाममोक्षार्थमिति क्रमेण पदचतुष्टयस्यार्थः

जनानारभिरतिवस्न जीवार्थमीश्वरस्य सृष्ट्यादिषु प्रव
र्त्तेरित्ति दर्शयति प्रभुरीश्वरस्य उपाधिवश्यताभावे
न नित्यमुक्ततां दर्शयति अयमर्थे प्रायः सुगुणमे
वागुरोरनर्भे भूतं सर्वज्ञं सर्वशक्तिं सर्वेश्वरं सर्व
स्य नियंतारं सर्वोपास्यं सर्वकर्मफलप्रदातारं स
मस्तकल्याणगुणनिलयं सच्चिदानंदं भगवंतं श्रु
तयः प्रतिपादयंति यः सर्वज्ञः सर्ववित् यस्य ज्ञान स
मयं तपः सर्वस्य वशी सर्वस्येशानः यः पृथिव्यां
तिष्ठन् पृथिव्यांतरः सोऽकामयत बहुस्यां सरोहत
तत्तेजोऽसृजत सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म इत्याद्याः तथा
भूतेश्वरत्तानां वत्संसारिणो जीवस्य तत्त्वेन तत्प
ते तत्त्वमसीत्यादि वाक्यानि बोधयंति तत्र च तत्त्वं पद

१५४

128

योः सामानाधिकरण्यं प्रतीयते नच प्रकारांतरेणा
घटमानं वस्तु पर्यवसानं गमयति तथाहि नताव
द्वेष्यद्व्यामिश्रितिवदुभयोरेकार्थाभिधानेन सामा
नाधिकरण्यं यथोक्तं आरमिक्षां देवतायुक्तां वस्त्ये
वैषत्तहित आरमिक्षापदसांनिध्यात्तस्यैव विशेषया
र्यता मिति कुतः भिन्नार्थत्वात् नचजहत्स्वार्थयो
र्जहल्लक्षणयार्विशेषणविशेष्यभावेन नील
मुत्पलमितिवत् यथोक्तं स्वबुद्ध्यारज्यते येन वि
शेष्यं तद्विशेषणमित्यादि कुतः एकार्थत्वेन त
दयोगात् नचजहत्स्वार्थत्वेन संबंधलक्षणया कुंभे ए३
तडुमागारितिवत् कुतः एकार्थस्यैवविवक्षितत्वात्
अतो जहदजहत्स्वार्थलक्षणया सोयं देवदत्त इति

र्घेजन्मनैवजन्मजीवानामुच्यते नस्वतोघटनादित्याह
श्लो० नघटतउद्भवः प्रकृतेपुरुषयोरजयोरुभयपयु
जाभवेत्पसुमतोजलबुद्बुदवत्‌॥त्वयेत इमेततोघे
र्विधनामगुतौः परमेश्वरेत इत्यादिमधुरन्नेलेलु
रन्योपदशाः १८ नयकेप्रकृतेर्जीवरूपेणोद्भवः स्या
त्पुरुषस्यवाउभयोर्वाआद्येजीवनोलडुत्वापत्तेः द्वि
तीयेपुरुषस्याद्येकालित्वप्रसंगः अतएवनतृतीयइ
त्याशयेनोक्तं प्रकृतेपुरुषयोरुद्भवोनघटतइत्ते
वमुक्त्वाजेत्वप्रत्येपाद्नादयीत्याह अजयोरिने त
थाचश्रुतिः अजामेकांलोहितशुक्लकृष्णांबह्वीः
प्रजाजनयंतीस्वरूपाः अजोह्येकोजुषमाणोऽनु
शेतेजहात्येनांभुक्तभोगा॥मजोन्यइति उभययुजा

129

तुभवंतितउभयंचतत युज्यतइतियुक्तसंबंधपरस्परा
ध्यस्तमितियावत् तेनक्रमुभतः प्राणाद्युपाधयो
जीवाजायंतेऽस्यार्थः जलबुद्बुदवदिति यथाकेवले
नासलिलेन वासलिलेनवाजलबुद्बुदानभवंति किं
तु मिलिताभ्यांतद्वत् तत्रच यथानैलोनैमित्तंजल
मुपादानं एवमत्रापिप्रकृतिर्निमित्तं पुरुषउपा
दानं तस्माद्वाएतस्मादात्मनआकाशः संभूतः
सोकामयतबहुस्यांप्रजायेयेति यथाग्नेः क्षुद्रा
विस्फुलिंगाः व्युच्चरंत्येवमेवास्मादात्मनः सर्वे
प्राणाः सर्वेलोकाः सर्वेदेवाः सर्वाणिभूतानि
सर्वएतआत्मनोव्युच्चरंतीत्यादिषुप्रकृतिषुचेतना
चेतनप्रपंचस्यपरमात्मोपादानत्वप्रवणात्

न चाविकारित्वं परिणामानंगीकारात्केचित्पुनः परिणा
ममंगीकृत्यात्मनो विकारमेवार्थेपरीतं निर्णीतोपाधि
न भावमिच्छन्ति सर्वथातावत्प्रकृतिपुरुषैक्याद्वर्तीरते
सिद्धं तस्यैकमेवाद्वितीयं ब्रह्म आत्मामेकोऽस्येनाजीवात्म
रूपमात्मेत्यादिश्रुतिबलात् उत्पत्तिप्रवणाच्च जीवात्मा
मोपाधिकमेव जन्म न वस्तुत इत्युक्तं उपाधिलयेन पर
मात्मनि पुनर्लयप्रवणात् रूपेन वास्तवं जन्मेत्याह त्व
यीति त्वयि विकारात्मनेति इमे जीवास्तत इति यतो न
वास्तवं जन्म तस्माद्विविधनामनतोऽनेकप्रकारका
योपाधिरभेः सौम्य सुषुप्तौ लीना बभूवुः ततः सुषुप्ते प्रल
ययोर्मधुन्यन्नौषधरसा इव लीयन्ते यथा मधुनि सक
लकुसुमरसा विवेकमेव नोपलभ्यमाना अस्यैव सामा
न्येनोपलभ्यन्ते एवं स्वोपाधौ विलीनमात्रलयात्कार

१५९ -130

तास्वरवेद्यमानत्वात्सामान्यतोवर्त्तते मुक्तोनुकारँस्या
द्पेलयात् त्वयिपरमेनिरूपाधौसर्वंतद्वासनाविलीयं
तदस्तीत्विवेकः तथाचश्रुतयः यथासौम्यमधुमधुक
तोनिस्तिष्ठंतिनानात्ययानांवृक्षाणांरसान्समवहार
मेकतांगमयंतितेयथातत्रविवेकंनलभंते अमुष्या
हंवृक्षस्यरसोस्म्यमुष्याहंवृक्षस्यरसोस्मीत्येवमे
वखलुसौम्येमाःसर्वाःप्रजाःसतिसंपद्यनविदुःसति
संपद्यामहइति यथानद्यःस्यंदमानाःसमुद्रेस्तंगछं
तिनामरूपेविहायतथाविद्वान्नामरूपाद्विमुक्तःप
रात्परंपुरुषमुपैतिदिव्यमित्याद्याः१८ यस्मिन्बुध
स्थितेयमस्थयज्ञातिर्विष्वंतयाद्वैजीवोपेतंगुरुकरु
णायाकेवलात्मावबोधे अत्यंतांतंव्रजतिसहसासि
धुवत्सिंधुमध्येमधोश्चिह्नंतस्मैभवनगुरवेभावयेतंनसिंहं
२

अन्यप्रकारेण

भवेत्सम्यगनुजानतां परमतं मतं तु यस्तथा १७ वस्तुनस्त्वानं
ता धुवास्ते नैव रूपेणाख्येयाः सर्वगता अनुभूतो जीवाय
रेस्युस्तर्हि निषांसमत्वात् ज्ञानस्यतानघटत इत्याशंक्याह धुव
त्वे यन्मोक्षे यमनेत्वयानस्यात् इतरथा तु घटेत इति कथंय
मयं उपाधितो यदहंकारप्रायं यजीवाख्यं अज्ञाने जातं तत्र
स्य स्वाविकारस्याने यंत्र नियामकं भवेत् अविद्या व्याकार
णत या अपरित्याज्य एकं तत्सम्यगनुस्यूतं ननु एकं यत्
द्वैधीयते चेत्तदुच्यतामित्यत आह अनुजान
तां यत्परमतमसीत्ति जानीमहे इत्येवं तां परमतमविज्ञातप्राय
अविषयत्वात् तथा च श्रुतिः यस्यामतं तस्य मतं मतं य
स्य न वेद सः अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानतां अव
चनेनैव प्रोवाच सहतूष्णीं बभूवेत्यादि एकं च मतस्य

१८७

श्रीः ज्ञातस्य दुःखत्वाद्दोषप्रचलनात् तथा च श्रुतिः पारे मन्य

से सुखेद्रते इहरमेवार्थे नूनं त्वं वेत्थ ब्रह्मलोकरूपं यद्दस्य त्वं

131 देवेषु वेद इत्यादि तस्माद्यत्राद्यष्टु विघोत्यमतत्थंगिरुके

मर्त्ये सर्वाणि स्यूतत्वेन समर्पणेयंतम्भवेदित्यर्थः ९७ अ

तर्यतः सर्वलोकस्य गतिः प्रवृत्यायुत्त्या चैवमेवावसे

यः यः सर्वज्ञः सर्वशक्तिर्नृसिंहः श्रीमत्तं तं चेतसैवा

वलंबे ॥१॥ ननु च यदि परमात्मनो जीवा जायेतेइ

त्तिनियंतृत्वे यन्यभाव उच्यते तथा सति जीवानामने

त्यत्वप्रसंगो न प्रतेरेनं कृतनाशाकृताभ्यागमप्रसं

गः स्यात् १ किं च तदा मोक्षो नाम जीवस्य स्वरूपहानि

रेव स्यात् न चैतद्युक्तं स्वप्रकाशज्ञानेदात्मनोऽर्थेघाकृता

नर्थनिवृत्तेर्मात्रस्य मोक्षत्वाभ्युपगमादित्याशंक्योपा